ओम्

'आर्य साहित्य विभाग ग्रन्थमाला' का पांचवां पुष्प

सामवेद-शतकम्

(सामवेद के ईश्वर भक्ति के १०० मन्त्रों का अद्भुत संग्रह)

संग्रहकर्त्ता

स्वामी अच्युतानन्द सरस्वती

प्रथमवार	श्रावण १०९	मूल्य सादा =)
२०००	दयानन्दाब्द	सजिल्द ।)॥

"आर्य-साहित्य-विभाग-ग्रन्थमाला"

सम्पादक—

वाचस्पतिः ऐम० ए०

ग्रन्थांक ५

प्रकाशक—

अध्यक्ष 'आर्य साहित्य विभाग'

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, लाहौर

मुद्रक—

श्री देवचन्द्र विशारद

हिन्दी भवन प्रेस, अनारकली, लाहौर

ओ३म्

सम्पादकीय वक्तव्य

हमारे ऋषियों ने स्वाध्याय की महिमा बहुत गाई है। स्वाध्याय सब से उत्तम वेद का माना गया है। इसी बात को अनुभव करते हुए आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा ने वेदों के गुटके निकालने आरम्भ किये। प्रत्येक वेद से ईश्वर भक्ति के १००-१०० मन्त्रों के संग्रह तय्यार करने का निश्चय किया गया। मन्त्रों के साथ उनका शब्दार्थ और भावार्थ भी दिया जा रहा है। इन सब गुटकों के संग्रहकर्त्ता पूज्य श्री १०८ स्वामी अच्युतानन्द जी महाराज

हैं। आप इतने वेदभक्त हैं कि इस वृद्ध अवस्था में भी आप का समय वेद के पठन पाठन और उपदेश में ही लग रहा है।

एप्रिल १९३२ में 'ऋग्वेद शतकम्' प्रकाशित किया गया और नवम्बर १९३२ में अर्थात् आर्य समाज लाहौर के उत्सव पर 'यजुर्वेद शतकम्' जनता की भेंट किया गया।

हम आर्य जनता का धन्यवाद करते हैं कि उसने इन गुटकों को अपना कर हमारा उत्साह बढ़ाया है, और उसी उत्साह से प्रेरित होकर हम 'सामवेद शतकम्' जनता की भेंट कर रहे हैं। 'आर्य साहित्य विभाग' की ओर से प्रयत्न किया गया है कि यह गुटका पहले दोनों शतकों की अपेक्षा अधिक सुन्दर छपे और छापे की कोई भी अशुद्धियाँ इस में न रहें।

सामवेद के मन्त्रों के पते ढूण्ढने अन्य वेदों की अपेक्षा साधारण जनता के लिये कुछ कठिन है, इसलिये इस विषय में थोड़ा सा लिखना अनावश्यक न होगा।

सामवेद के दो भाग हैं, जिन को आर्चिक कहा जाता है। पहिले भाग का नाम पूर्वार्चिक है, और दूसरे का नाम उत्तरार्चिक है। इन भागों का सङ्केत सूचियों में पू० और उ० से किया जाता है। इस गुटके में भी इसी प्रकार से किया गया है। पू० और उ० के संकेत के पश्चात् की संख्या प्रपाठक और उससे अगली संख्या अर्धप्रपाठक की है। पूर्वार्चिक में प्रायः १०-१० मन्त्रों की दशतयी है, परन्तु उत्तरार्चिक में दशतयी का विभाग नहीं है। पूर्वार्चिक में प्रपाठक और अर्धप्रपाठक की

संख्या के पश्चात् दशतयी और मन्त्र की संख्या है, उत्तरार्चिक में दशतयी का विभाग न होने से वह संख्या नहीं है। इस लिये इस गुटके में पू० के संकेत के पश्चात् चार संख्याएँ हैं और उ० के संकेत के पश्चात् केवल तीन ही संख्याएँ हैं।

आशा है कि आर्य जनता हमारे इस गुटके को पहले गुटकों की अपेक्षा भी अधिक अपनाएगी, ताकि अगला गुटका 'अथर्ववेद शतकम्' जो कि हम शीघ्र प्रकाशित करेंगे, पूरे उत्साह से और और भी सुन्दर प्रकाशित कर सकें।

श्रावण १०९ दयानन्दाब्द

वाचस्पति (सम्पादक)
अध्यक्ष
आर्य साहित्य विभाग

मन्त्रों की अकारादि क्रम से सूची

मंत्र	पृष्ठ संख्या

मंत्र	पृष्ठ संख्या

सामवेद-शतकम्

२ ३ १ २ ३ १ २ ३ २ ३ १ २
अग्न आ याहि वीतये, गृणानो हव्यदातये।
१ २ २ ३ १ २
नि होता सत्सि बर्हिषि ॥१॥ पू० १।१।१।१॥*

शब्दार्थ—(अग्ने) हे स्वप्रकाश सर्वव्यापक सब के नेता परमपूज्य परमात्मन्! (बर्हिषि) आप हमारे ज्ञानयज्ञरूप ध्यान में (आयाहि) प्राप्त होओ। (गृणानः) आप स्तुति किये हुए हैं। (होता) आप ही दाता हैं (वीतये) हमारे हृदय में प्रकाश करने के लिये तथा (हव्य-

---

* सामवेद के मन्त्रों के पते ढूण्ढने के संकेतों के लिये ग्रन्थ की भूमिका देखें। (सम्पादक)

दातये) भक्ति प्रार्थना उपासना का फल देने के लिये (निसत्सि) विराजो।

भावार्थः—परम कृपालु परमात्मा, वेद द्वारा हम अधिकारियों को प्रार्थना करने का प्रकार बताते हैं। हे जगत्पितः! आप प्रकाशस्वरूप हैं, हमारे हृदय में ज्ञान का प्रकाश कीजिये। आप यज्ञ में विराजते हो, हमारे ज्ञानयज्ञ रूप ध्यान में प्राप्त होओ। आपकी वेद और वेदद्रष्टा ऋषि लोग स्तुति करते हैं, हमारी स्तुति को भी कृपा करके श्रवण कर हम पर प्रसन्न होओ। आपही सब को सब पदार्थ और सुखों के देने वाले हो।

१ २ ३ २ ३ २ ३ १ २ ३ २
त्वमग्ने यज्ञानां होता विश्वेषां हितः।
३ २ ३ १ २ ३ १ २
देवभिर्मानुषे जने ॥२॥ पू० १।१।१।२॥

शब्दार्थः—हे (अग्ने) ज्ञानस्वरूप परमात्मन्! आप (विश्वेषां यज्ञानाम्) ब्रह्म यज्ञादि सब यज्ञों के (होता) ग्रहण करने वाले स्वामी हैं। आप (देवेभिः) विद्वान् भक्तों से (मानुषे जने) मनुष्यवर्ग में (हितः) धारण किये जाते हैं।

भावार्थः—आप जगत्पिता सब यज्ञों के ग्रहण करनेवाले, यज्ञों के स्वामी हैं, अर्थात् श्रद्धा से किये यज्ञ होम, तप, ब्रह्मचर्य, वेद-पठन, सत्यभाषण, ईश्वर-भक्ति आदि उत्तम उत्तम काम आप को प्यारे हैं। मनुष्य जन्म में ही यह उत्तम कर्म किये जा सकते हैं और इन श्रेष्ठ कर्मोंद्वारा, इस मनुष्य जन्म में आप परमात्मा का यथार्थ ज्ञान भी हो सकता है। पशु पक्षी आदि अन्य योनियों में तो आहार, निद्रा, भय, रागद्वेषादि ही वर्तमान हैं, न इन

योनियों में यज्ञादि उत्तम काम बन सकते हैं और न आप का ज्ञान ही हो सकता है ॥२॥

३ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २
अग्निं दूतं वृणीमहे, होतारं विश्ववेदसम् ।
३ २ ३ १ २ ३ १ २
अस्य यज्ञस्य सुक्रतुम् ॥३॥ पू० १।१।१।३॥

शब्दार्थः—(विश्ववेदसम्) सबको जानने वाले ज्ञानस्वरूप, ज्ञान के दाता (होतारम्) व्यापकता से सबके ग्रहण करनेवाले (दूतम्) कर्मों का फल पहुंचाने वाले (अस्य यज्ञस्य) इस ज्ञान यज्ञ के (सुक्रतुम्) सुधारनेवाले (अग्निं वृणीमहे) ऐसे ज्ञानस्वरूप परमात्मा को हम सेवक जन स्वीकार करते हैं ।

भावार्थः—आप ज्ञानस्वरूप परमेश्वर ही, वेदों द्वारा सबके ज्ञान प्रदाता हैं । सबके कर्मों के यथायोग्य फलदाता भी आप हैं, सब

जगह व्यापक होने से, सब ब्रह्माण्डों को आप ही धारण कर रहे हैं। आप ही हमारी भक्ति उपासना के श्रेष्ठ फल के देने वाले हैं, आप इतने बड़े अनन्त श्रेष्ठ गुणों के धाम और पतित पावन परमदयालु सर्वशक्तिमान् हैं, तो हमें भी योग्य है कि, सारी मायिक प्रवृत्तियों से उपराम हो, आप की ही शरण में आवें, आप को ही अपना इष्टदेव परम पूजनीय समझ निशिदिन आपके ध्यान और आप की आज्ञापालन में तत्पर रहें ॥३॥

३ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २
अग्निर्वृत्राणि जङ्घनद्द्रविणस्युर्विपन्यया ।
१ २ ३ १ २ ३ २
समिद्धः शुक्र आहुतः ॥४॥ पू० १।१।१।४॥

शब्दार्थः—(विपन्यया) स्तुति से (द्रविणस्युः) अपने प्यारे उपासकों के लिये आत्मिक बल

रूप धन का चाहने वाला (समिद्धः) विज्ञात हुआ (शुक्रः) ज्ञान और बल वाला तथा ज्ञान और बल का दाता (आहुतः) अच्छे प्रकार से भक्ति किया हुआ (अग्निः) ज्ञान स्वरूप ईश्वर (वृत्राणि) अविद्यादि अन्धकार दुःखों और दुःख साधनों को (जङ्घनत्) हनन करे।

भावार्थः—हे जगत्पते! आपकी प्रेम से स्तुति प्रार्थना उपासना करनेवालों को, आप आत्मिक बल देते हो, जिससे आपके प्यारे उपासक भक्त, अविद्यादि पञ्चक्लेश और सब प्रकार के दुःख और दुःख साधनों को दूर करते हुए, सदा आपके ब्रह्मानन्द में मग्न रहते हैं। कृपासिन्धो भगवन्! हम पर ऐसी कृपा करो कि, हम भी आपके ध्यान में मग्न हुए, अविद्यादि सब क्लेशों और उनके

कार्य दुःखों और दुःख साधनों को दूर कर, आप के स्वरूप भूत ब्रह्मानन्द को प्राप्त होवें ॥४॥

१ २ ३ १ २ ३ १ र ३ १ २
नमस्ते अग्न ओजसे, गृणन्ति देव कृष्टयः ।
१ २ ३ १ ३
अमैरमित्रमर्दय ॥५॥ पू० १।१।२।१॥

शब्दार्थः—हे अग्ने ! (ते नमः) आपको हमारा नमस्कार है । (कृष्टयः) आपके प्यारे भक्त मनुष्य (ओजसे गृणन्ति) बल प्राप्ति के लिये आपकी स्तुति करते हैं । (देव) हे प्रकाश-स्वरूप और सबके प्रकाश करनेवाले सुख दाता प्रभो ! (अमैः) रोग भयादिकों से (अमित्रम्) पापी शत्रु को (अर्दय) पीड़ित कीजिये ।

भावार्थः—हे ज्ञानस्वरूप सर्वसुखदायक

देव! आपकी स्तुति प्रार्थना उपासना हम सदा करें, जिससे हमें आत्मिक बल मिले और ज्ञान का प्रकाश हो। जो लोग आपसे विमुख होकर आपकी भक्ति और वेदों की आज्ञा से विरुद्ध चलते, नास्तिक बन संसार की हानि करते हैं, उन पतितों तथा संसार के शत्रुओं को ही वाह्य शत्रु और आभ्यन्तर शत्रु काम क्रोध रोग शोक भयादि, सदा पीड़ित करते रहते हैं ॥५॥

३ १ २ ३ १ २ १ ३ १ २ ३ १ २
अग्निमिन्धानो मनसा, धियं सचेतमर्त्यः।
३ १ २ ३ १ २
अग्निमिन्धे विवस्वभिः ॥६॥ पू० १।१।२।९॥

शब्दार्थः—(मर्त्यः) मनुष्य (मनसा) सच्चे मन से श्रद्धा पूर्वक (अग्निम् इन्धानः) प्रभु का ध्यान करता हुआ (धियम्) बुद्धि को (सचेत)

अच्छे प्रकार प्राप्त हो, इसलिये (विवस्वभिः) सूर्य्य की किरणों के साथ (अग्निम् इन्धे) प्रकाशस्वरूप प्रभु को हृदय में विराजमान करे।

भावार्थः—मनुष्य का नाम मर्त्य अर्थात् मरण धर्मा है। यदि यह मृत्यु से बचना चाहे तो जगत्पिता की उपासना करे।

सबको योग्य है कि दो घण्टा रात्रि रहते उठ कर, प्रभु का ध्यान करें। प्रातःकाल सूर्य के निकले कभी सोवें नहीं। प्रभु की भक्ति करें तो लोगों को दिखलाने के लिये दम्भ से नहीं, किन्तु श्रद्धा और प्रेम से ध्यान करते करते परमात्मा के ज्ञान द्वारा मोक्ष को प्राप्त होकर मृत्यु से तर जावें॥६॥

१ २ ३ २ ३ २ ३ २ ३ १ २ ३ १ र २ र
अग्ने मृड महाँ अस्यय आ देवयुञ्जनम्।
३ १ २ ३ २ ३ १ २
इयेथ बर्हिरासदम् ॥७॥ पू० १।१।३।३॥

शब्दार्थः—(अग्ने) हे पूजनीय ईश्वर ! हमें (मृड) सुखी करो (महान् असि) आप महान् हो (देवयुं जनम्) ज्ञान यज्ञ से आप देव की पूजा चाहने वाले भक्त को (अयः) प्राप्त होते हो, (बर्हिः) यज्ञ स्थल में (आसदम्) विराजने को (आ इयेथ) प्राप्त होते हो ।

भावार्थः—हे परम पूजनीय परमात्मन्! आप श्रद्धा भक्ति युक्त पुरुषों को सदा सुखी रखते और प्राप्त होते हो । श्रद्धा भक्ति और सत्कर्म-हीन नास्तिक और दुराचारियोंको तो, न आप की प्राप्ति हो सकती है, न वे सुखी हो सकते हैं। इसलिये, हम सब को योग्य है कि, आपकी वेदाज्ञा के अनुसार यज्ञ,होम,तप,स्वाध्याय और श्रद्धा, भक्ति, नम्रता, प्रेम से आपकी उपासना में लग जावें जिससे हमारा कल्याण हो ॥७॥

३ २ ३ २ ३ २ ३ १र २र ३ २ १ २
अग्निर्मूर्द्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्या अयम्।
३ १ २र
अपां रेतांसि जिन्वति ॥८॥ पू० १।१।३।७॥

शब्दार्थः—(अयम् अग्निः) यह प्रकाशमान् जगदीश्वर (मूर्द्धा) सर्वोत्तम है (दिवः ककुत्) प्रकाश की टाट है। जैसे बैल की टाट (कोहान सा) ऊँची होती है ऐसे ही परमेश्वर का प्रकाश अन्य सब प्रकाशों से श्रेष्ठ है (पृथिव्याः पतिः) पृथिवी आदि सब लोकों का पालक है। (अपाम्) कर्मों के (रेतांसि) बीजों को (जिन्वति) जानता है।

भावार्थः—आप परम पिता जी सब से ऊंचे, सब से श्रेष्ठ, प्रकाश स्वरूप सब के कर्मों के साक्षी और फल प्रदाता हैं। ऐसे आप जगत्पिता प्रभु को सदा अति समीपवर्ती जान,

हम सबको सब पापों से रहित होना, सदाचार और आप की भक्ति में सदा तत्पर रहना चाहिये ॥८॥

१ २ ३ १ ३ २र २र
तं त्वा गोपवनोगिरा, जनिष्ठदग्ने अङ्गिरः।
१ २ ३ १ २
स पावक श्रुधी हवम् ॥९॥ पू० १।१।३।९॥

शब्दार्थः—हे अग्ने! (तम् त्वा) उस आपको (गो पवनः) वाणी की शुद्धि चाहने वाला और आपकी स्तुति से जिसकी वाणी शुद्ध होगई है ऐसा भक्त पुरुप (गिरा) अपनी वाणी से (जनिष्ठत्) आपकी स्तुति करता हुआ आपको ही प्रकट कर रहा है। (अङ्गिरः) हे ज्ञाननिधे! (पावक) पवित्र करने वाले! (स हवम् श्रुधी) ऐसे आप हमारी स्तुति प्रार्थना को सुनकर अङ्गीकार करो॥

भावार्थः—मनुष्य की वाणी, संसार के अनेक पदार्थों के वर्णन और कठोर, कटु, मिथ्या भाषणादिकों से अपवित्र हो जाती है। परमात्मा पतित पावन हैं, जो पुरुष उनके ओंकारादि सर्वोत्तम पवित्र नामों का वाणी से उच्चारण और मन से चिन्तन करते हैं, वे अपनी वाणी और मन को पवित्र करते हुए, आप पवित्र होकर, दूसरे सत्सङ्गियों को भी पवित्र करते हैं। धन्य हैं ऐसे सत्पुरुष जो आप भक्त बनकर दूसरों को भी भक्त बनाते हैं, वास्तव में उनका ही जन्म सफल है ॥१॥

२३ १२ ३२३ २ ३ १
परि वाजपतिः कविरग्निर्हव्यान्यक्रमीत् ।
२३१२ ३ १२
दधद्रत्नानि दाशुषे॥१०॥ पू० १।१।३।१०॥

शब्दार्थः—(वाजपतिः) अन्नपति, (कविः)

सर्वज्ञ, (अग्निः) प्रकाशस्वरूप परमात्मा (दाशुषे) दानी के लिये (हव्यानि) ग्रहण करने योग्य (रत्नानि) विद्या, मोती, हीरे स्वर्णादि धनों को (दधत्) देता हुआ (परिअक्रमीत्) सर्वत्र व्याप रहा है ।

भावार्थः—हे सर्वसुखदातः ! आप दानशील हैं, इसलिये दानशील उदार भक्त पुरुष ही आप को प्यारे हैं । विद्यादाता को विद्या, अन्नदाता को अन्न, धनदाता को धन, आप देते हैं । इसलिये विद्वानों को योग्य है, कि आपकी प्रसन्नता के लिये, विद्यार्थियों को विद्या का दान बड़े प्रेम से करें, धनी पुरुषों को भी योग्य है, कि योग्य सुपात्रों के प्रति धन, अन्न, वस्त्रादिकों का दान उत्साह, श्रद्धा, भक्ति और प्रेम से करें। आप के स्वभाव के अनुसार

चलने वाले सत्पुरुषों को आप सब सुख देते हैं। इसलिये हम सब को आप के स्वभाव और आज्ञा के अनुकूल चलना चाहिये, तब ही हम सुखी होंगें अन्यथा कदापि नहीं ॥१०॥

३ २ ३ १र २र ३ १ २ ३ २
कविमग्निमुप स्तुहि, सत्यधर्माणमध्वरे ॥
३ १ २ ३ १ २
देवममीवचातनम् ॥११॥ पू० १।१।३।१२॥

शब्दार्थः—(कविम्) सर्वज्ञ (सत्यधर्माणम्) सत्यधर्मी अर्थात् जिसके नियम सदा अटल हैं (देवम्) सदा प्रकाश स्वरूप और सब सुखों के देने वाले (अमीवचातनम्) रोगों के विनाश करने वाले (अग्निम्) तेजोमय परमात्मा की (अध्वरे) ब्रह्मयज्ञादि में (उपस्तुहि) उपासना और स्तुति कर।

भावार्थः—हे प्रभो ! जिस आप जगत्

पति के नियम से बांधे हुए, पृथिवी, सूर्य्य, चन्द्र, मङ्गल, शुक्र, शनि, बृहस्पति आदि ग्रह, उपग्रह अपने २ नियम में स्थित होकर अपनी २ गति से सदा घूम रहे हैं । आप जगन्नियन्ता के नियम को तोड़ने का किसी का भी सामर्थ्य नहीं। ऐसे अटल नियम वाले सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान्, स्वप्रकाश, सुखदायक, रोग शोक विनाशक, आप परमात्मा की, मुमुक्षु, पुरुप श्रद्धा, भक्ति से प्रेम में मग्न होकर प्रार्थना और उपासना सदा किया करें, जिससे उन का कल्याण हो ॥ ११ ॥

१ २ ३ २र २र ३ १ २
कस्य नूनं परीणसि धियोजिन्वसि सत्पते।
१ २ ३ १ २ ३ १ २
गोपाता यस्य ते गिरः॥१२॥पू० १।१।३।१४॥

शब्दार्थः—(सत्पते) महात्मा सन्त जनों

के रक्षक ! (यस्य गिरः) जिस भक्त की वाणियें (ते) आपके विषय में (गोपाताः) अमृतरस से भरी हैं उसके लिये (कस्य) सुख की (परीणसि) बहुत सी (धियः) बुद्धियों को (जिन्वसि) भरपूर कर देते हैं।

भावार्थः—हे प्रभो ! आपके जो परम प्यारे सुपुत्र और अनन्य भक्त हैं, अपनी अतिमनोहर अमृतभरी वाणी से, सदा आप प्रभु के ही गुण गण को गान करते हैं। भक्त-वत्सल आप भगवान्, उन भक्तों को श्रेष्ठ बुद्धि से भरपूर कर देते हैं। आप की अपार कृपा से जिनको उत्तम बुद्धि प्राप्त हुई है, वे अपने मन से ऐसा चाहते हैं कि, हे दया के भण्डार भगवन् ! जैसी आपने हमको सद्बुद्धि दी है जिससे हम आपके भक्त और आप की

कृपा के पात्र बनें। ऐसी ही कृपा मेरे सब भ्राताओं पर कीजिये, उनको भी सद्बुद्धि प्रदान कीजिये, जिस से सब आप के प्यारे भक्त बन जायें, और सब सुखी होकर संसार भर में शान्ति के फैलाने वाले बनें ॥१२॥

३ १ २ ३ १ २ ३ २ २ ३ १ २
पाहि नो अग्न एकया, पाह्यूऽ३त द्वितीयया।
३ २ ३ २ ३ १ २ ३ १
पाहि गीर्भिस्तिसृभिरूर्जाम्पते पाहि
२ ३ १ २
चतसृभिर्वसो ॥१३॥ पू० १।१।४।२॥

शब्दार्थः—(ऊर्जांपते) हे बलपते! (वसो) हे अन्तर्यामिन् अग्ने! (एकया) ऋग्वेद रूप वाणी के उपदेशों से (नः पाहि) हमारी रक्षा करो। (उत द्वितीयया पाहि) और यजुर्वेद की वाणी से रक्षा करो। (तिसृभिः गीर्भिः पाहि)

ऋग्यजुः सामरूप त्रयी वाणी से रक्षा करो। (चतसृभिः पाहि) चारों वेदों की वाणी के उपदेशों से हमारी रक्षा करो।

भावार्थः—हे प्रभो! जैसे वेदों के पवित्र उपदेशों के संसार भर में फैलाने और धारण करने से सब मनुष्यों की इस लोक और परलोक में रक्षा और संसार में शान्ति फैल सकती है, ऐसी राजादिकों के पुलिसादि प्रबन्धों से भी नहीं, इसलिये, हे शान्तिवर्धक और सुरक्षक परमात्मन्! आप अपने वेदों के सत्योपदेशों को संसार भर में फैलाओ और हमें भी बल और बुद्धि दो कि आप की चार वेद रूप आज्ञा को संसार में फैला दें, जिस से सब नर नारी आप की प्रेम भक्ति में मग्न हुए सदा सुखी हों॥१३॥

२३ १२३ २३ २ क २र ३१२
प्रैतु ब्रह्मणस्पतिः, प्र देव्येतु सूनृता ।
१ २ ३१र र२र ३ १ २ ३ २ ३१
अच्छा वीरं नर्यं पङ्क्तिराधसं, देवा यज्ञं
२
नयन्तु नः ॥ १४ ॥ पू० १।२।६।२ ॥

शब्दार्थः—(ब्रह्मणस्पतिः) ब्रह्माण्ड वा वेद-पति परमात्मा (नः प्रैतु) हम को प्राप्त हो (देवी सूनृता) वेदवाणी (अच्छा) अच्छी तरह (प्र एतु) हमें प्राप्त हो (वीरं नर्यम्) फैलने वाले मनुष्य के हितकारक (पङ्क्ति-राधसम्) १ यजमान २ ब्रह्मा ३ अध्वर्यु ४ होता ५ उद्गाता इन पांच पुरुषों से सेवित (यज्ञम्) यज्ञ को (देवा नयन्तु) अग्नि वायु आदि देवता ले जावें।

भावार्थः—हे ब्रह्माण्डपते ! हम सब को तीन वस्तुओं की कामना करनी चाहिये—

एक आप परब्रह्म की प्राप्ति, दूसरी वेद विद्या, तीसरा यज्ञ, अथवा १. हम यजमानों को मन से ईश्वर का चिन्तन, २. वाणी से वेद-मन्त्रों का उच्चारण, ३. कर्म से अग्नि में आहुति छोड़ना।

१२ ३१२३ १र २र ३२
त्वमग्नेगृहपतिस्त्वं होता नो अध्वरे।
१र २र ३ १२३ २३ १२
त्वम्पोता विश्ववार प्रचेता यक्षि यासि
३ १२
च वार्यम् ॥१५॥ पू० १।२।६।७॥

शब्दार्थः—हे अग्ने (विश्ववार) सब को पूजन करने योग्य परमात्मन्! (त्वं नः अध्वरे) आप हमारे ज्ञान यज्ञ में (गृहपतिः) यजमान हैं। (त्वं होता) आप ही होता हैं। (त्वं पोता) आप ही पवित्र करने वाले हैं। (प्रचेता) चेताने वाले भी आप ही हैं। (यक्षि)

यजन भी आप ही करते हैं! (च) और (वार्यम् यासि) कर्म फल भी आप ही पहुँचाते हैं।

भावार्थ:—हे प्रभो! आप यजमान, होता आदि रूप हैं। यद्यपि ज्ञान यज्ञ में भी जीवात्मा, यजमान और वाणी आदि होता, पोता, प्रचेता आदि ऋत्विग् हैं, परन्तु आप की कृपा के विना कुछ भी कार्य्य सिद्ध नहीं हो सकता, इसलिये कहा गया है कि, आप ही यजमानादि सब कुछ हैं॥१५॥

१ २ २२ ३ २ ३ १ २ ३ १ २ ३
प्रसो अग्ने तवोतिभिः, सुवीराभिस्तरति
१ २ २ ३ २ ३ १२ २२
वाजकर्मभिः। यस्य त्वं सख्यमाविथ॥१६॥

पू० २।१।२।२॥

शब्दार्थ:—हे अग्ने पूजनीय ईश्वर! (त्वं

यस्य सख्यम् आविथ) आप जिस पुरुष की मित्रता को प्राप्त होते हैं, (सः) वह (तव) आपकी (वाजकर्मभिः) बल करने वाली (सुवीराभिः) सुन्दर वीर्य वाली (ऊतिभिः) रक्षाओं से (प्रतरति) पार होजाता है ।

भावार्थः—हे पूजनीय प्रभो ! जो पुरुष आप की भक्ति में लग गये और आपके ही मित्र होगये हैं, उन भक्तों को आप अपनी अति बल वाली, पुरुषार्थ और पराक्रम वाली रक्षाओं से, सर्वदुःखों से पार करते हैं, अर्थात् उनके सब दुःख नष्ट करते हैं। आपकी अपार कृपा से उन प्रेमियों को आत्मिक बल मिलता है, जिससे कठिन से कठिन विपत्ति आने पर भी, वे सदाचार रूप धर्म और आप की भक्ति से कभी चलायमान नहीं होते ॥१६॥

३ २ २ ३ १र २र ३ २ ३ १ २ ३ १
भद्रो नो अग्निराहुतो भद्रा रातिः सुभगा भद्रो
२ ३ २ २ ३ १र २र
अध्वरः। भद्रा उत प्रशस्तयः ॥१७॥

पू० २।१।२।५॥

शब्दार्थः—(सुभग) हे शोभन ऐश्वर्यवाले ! (नः) हमारा (आहुतः) सर्व प्रकार से ध्यान किया (अग्निः) ज्ञान स्वरूप परमात्मा आप (भद्रः) कल्याणकारी होओ। हमारा (रातिः) दान (भद्रा) श्रेष्ठ हो। (अध्वरो भद्रः) हमारा यज्ञ सफल हो, (उत) और (प्रशस्तयः) स्तुतियें (भद्राः) उत्तम हों।

भावार्थः—हम सबको योग्य है, कि होम, यज्ञ, दान, ध्यान, स्तुति प्रार्थना आदि जो जो अच्छे कर्म करें, श्रद्धा भक्ति प्रेम और नम्रता से करें, क्योंकि श्रद्धा और नम्रता के विना, किये

(आनिपीदत) मुक्ति प्राप्ति के लिये बैठो और (इन्द्रम्) परमेश्वर का (प्रगायत) कीर्तन करो (तु) पुनः सब सुखों को (आ इत) चारों ओर से प्राप्त होओ ।

भावार्थ:—हे मित्रो ! आप एक दूसरे के सहायक बनो और आपस में विरोध न करते हुए, मिलकर बैठो। उस जगत्पिता की अनेक प्रकार की स्तुति प्रार्थना उपासना करो। उस प्रभु के अनन्त कल्याणकारक गुणों का गान करो, ऐसे उसके गुणों को गान करते हुए, सब सुखों को और मोक्ष को प्राप्त होओगे, उसकी भक्ति के बिना मोक्ष आदि सुख प्राप्त नहीं हो सकते॥१८॥

३ १ २ ३ २ ३ २ ३ १ २
भद्रं भद्रं न आभरेषमूर्जं शतक्रतो ।
१ २ ३ १ २
यदिन्द्र मृडयासि नः ॥१९॥पू०२।२।८।९॥

शब्दार्थ:—(इन्द्र) हे परमैश्वर्ययुक्त प्रभो ! (नः) हमारे लिये (भद्रं भद्रम्) उत्तमोत्तम (इषम्) अन्न और (ऊर्जम्) रस को (आभर) प्राप्त कराओ, (शतक्रतो) बहुकर्मन् (यत्) जिससे (नः) हम को (मृडयासि) सुखी करे।

भावार्थ:—हे जगत्पितः ! हमें पुरुषार्थी बनाओ, जिससे हम अन्न, रस आदि उत्तम उत्तम पदार्थों को प्राप्त होकर सुखी हों। दूसरों के भरोसे रहते हुए, आलसी, दरिद्री बनकर आप ही अपने को हम दुःखी न बनावें। आपने हमें नेत्र, श्रोत्र, हस्त, पाद आदि इन्द्रियें उद्यमी बनने के लिये दी हैं, न कि आलसी बनने के लिये। आप उनकी ही सहायता करते हो, जो अपने पांव पर आप

खड़े रहते हैं इसलिये पुरुषार्थी बनकर जब हम आप से सहायता मांगेंगे तब आप हमें अपनी आज्ञा में चलने वाले मानते हुए अवश्य सब सुख देंगे ॥१९॥

१ २ ३ १ २ ३ १ १ ३ १ २
आ त्वा विशन्त्विन्दवः, समुद्रमिव सिन्धवः ।
२र ३ १ २
न त्वामिन्द्रातिरिच्यते॥२०॥ पू० ३।१।१।४॥

शब्दार्थः—(इन्द्र) हे परमेश्वर (इन्दवः) हमारे मन की सब वृत्तियां (त्वा आविशन्तु) आप में अच्छी तरह से लग जावें (सिन्धवः समुद्रमिव) जैसे नदियां समुद्र को प्राप्त होती हैं वैसे (त्वाम्) आप से (न अतिरिच्यते) कोई बढ़ कर नहीं है ।

भावार्थः—हे दयानिधे परमात्मन् ! हमारे मन की सब वृत्तियां आप में लग जावें ।

जैसे गंगा, यमुना, नर्मदा आदि नदियां विना यत्न से समुद्र में प्रवेश करती हैं। ऐसे ही हमारे मन की सब वृत्तियां, आप के स्वरूप में लगी रहें। क्योंकि आप से बढ़कर न कोई ऐश्वर्यवान् है और न सुखदायक दयालु है। हम आप की शरण में आये हैं, हम पर कृपा करो, हमारा मन, इधर उधर की सब भटकनाओं को छोड़कर, परमानन्द और शान्ति-दायक आपके ध्यान में मग्न होजावे ॥२०॥

२ ३ २ ३र २ ३ २ ३र १ २ ३ १ १
इन्द्रानुपूषणा वयं, सख्याय स्वस्तये।
३ २ ३ १ २
हुवेम वाजसातये ॥२१॥ पू० ३।१।१।९॥

शब्दार्थः—(वयम्) हम लोग (वाजसा-तये) धन, अन्न और बल प्राप्ति के लिये और (स्वस्तये) लोक परलोक में अपने

कल्याण के लिये (सख्याय) प्रभु से मित्रता और उसकी अनुकूलता के लिये (इन्द्रम्) परमऐश्वर्ययुक्त (नु) और (पूषणम् हुवेम) पालन पोषण करनेवाले परमेश्वर की उपासना और सत्कार करें।

भावार्थः—हे सर्वपालक पोषक प्रभो ! जो श्रेष्ठ पुरुष आप की उपासना और आप का ही सत्कार करते हैं, आप उनको धन, अन्न, आत्मिक बल, कल्याण आदि सब कुछ देते हैं। जो लोग आप से विमुख होकर दुराचार में फंसे हैं, उनको न तो यहां शान्ति वा सुख प्राप्त होता है, न मरकर। इसलिये हमें वेदों के अनुसार चलने वाले सदाचारी, अपने भक्त बनाओ, जिंससे धन, अन्न, बल और कल्याण सब कुछ प्राप्त हो सके ॥२१॥

१ २ ३ १र २र३ १ २र
न कि इन्द्र त्वदुत्तरं न ज्यायो अस्ति वृत्रहन्॥
२ ३२उ ३ २
नक्येव यथा त्वम्॥२२॥ पू० ३।१।१।१०॥

शब्दार्थः—हे इन्द्र परमेश्वर ! (त्वत्) आप से (उत्तरं नकि) कोई उत्तम नहीं, (न ज्यायः) न आप से कोई बड़ा (अस्ति) है, (वृत्रहन्) हे मेघनाशक सूर्य के तुल्य अविद्यादि दोष-नाशक प्रभो ! (यथा त्वम्) आप जैसा (नकि एव) भी संसार भर में भी दूसरा कोई नहीं।

भावार्थः—हे देव ! संपूर्ण ब्रह्माण्ड आप प्रभु के बनाये हुए हैं और उन ब्रह्माण्डों में रहने वाले समस्त प्राणी, आप जगन्नियन्ता की आज्ञा में वर्त्तमान हैं, आप की आज्ञा को जड़ वा चेतन, कोई नहीं उल्लंघन कर सकता, इसलिये आप के बराबर भी

कोई नहीं, तो आप से श्रेष्ठ वा बड़ा कहां से होगा, सब ब्रह्माण्डों के और उन में रहने वाले प्राणिमात्र के पालक, रक्षक, सुखदायक भी आप परमात्मा हैं। अपन प्यारे ज्ञानी भक्तों को आप सदा सुखी रखते हैं ॥२२॥

२ ३र ३ २ १ ३ १र २र ३२
इदं विष्णुर्विचक्रमे, त्रेधा निदधे पदम्।
२ ३
समूढमस्य पांसुले ॥२३॥ पू० ३।१।३।९॥

शब्दार्थः—(विष्णुः) व्यापक परमात्मा ने (इदम्) इस जगत् को (त्रेधा) पृथिवी, अन्तरिक्ष और द्युलोक इन तीन प्रकार से (विचक्रमे) पुरुषार्थ युक्त किया है (अस्य) इस जगत् के (पांसुले) प्रत्येक रज वा परमाणु में (समूढम्) अदृश्य (पदम्) स्वरूप को (निदधे) निरन्तर धारण किया है।

भावार्थः—आप विष्णु ने तीन लोक और लोकान्तर्गत अनन्त पदार्थ तथा सब प्राणियोंके शरीर उत्पन्न किये हैं। इन सबको आप ने ही धारण किया है और इन सब पदार्थों में अन्तर्यामी होकर व्याप रहे हैं। कोई लोक वा पदार्थ ऐसा नहीं, जहां आप विष्णु व्यापक न हों, तो भी सूक्ष्म होनेसे हमारे इन चर्ममय नेत्रोंसे नहीं देखे जाते। कोई महात्मा ही अन्तर्मुख होकर आपको ज्ञान-नेत्रोंसे जान सकता है, बहिर्मुख संसार के भोगों में सदा लम्पट मनुष्य तो, हज़ारों जन्मोंमेंभी आप जगन्नियन्ता परमात्मा को नहीं जान सकते॥२३॥

१र २र ३ १र २र ३ १ २
त्वामिद्धि हवामहे, सातौ वाजस्य कारवः।
३ १ २ ३ १ २ ३ २३ २उ ३ १ २
त्वां वृत्रेष्विन्द्र सत्पतिं, नरस्त्वां काष्ठास्वर्वतः॥
२४॥ पू० ३।१।५।२॥

शब्दार्थः—हे (इन्द्र) परमेश्वर (अर्वतः नरः) अश्वादि पर चढ़ने वाले वीर नर (वृत्रेषु त्वाम्) शत्रुओं से घेरे जाने पर आप का ही सहारा लेते हैं, (काष्ठासु) सब दिशाओं में (सत्पतिं त्वाम्) महात्मा सन्त जनों के पालक और रक्षक आप को ही भजते हैं, इसलिये (कारवः) आप की स्तुति करने वाले हम भी (वाजस्य सातौ) बल के दान निमित्त (त्वाम् इत् हि) केवल आप को ही (हवामहे) पुकारते हैं।

भावार्थः—हे प्रभो! सब दिशाओं में सन्त-जनों के रक्षक आप परमेश्वर को, जैसे शत्रुओं से घेरे जाने पर, बलप्राप्ति के लिये, वीर पुरुष पुकारते हैं। ऐसे ही हम आप के सेवक भक्तजन भी काम क्रोधादि शत्रुओं से घेरे जाने पर, उनको जीतने के लिये, आप

से ही बल मांगते हैं। दयामय ! जो आप की शरण आता है खाली नहीं जाता। हम भी आप की शरण आये हैं, हम अपने भक्तों को आप की आज्ञा रूप वेदों में दृढ़ विश्वासी और जगत् का उपकारक बनाओ, हम नास्तिक और स्वार्थी कभी न बनें, ऐसी कृपा करो ॥२४॥

१ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २
यत इन्द्र भयामहे, ततो नो अभयं कृधि।
१ २ ३ २उ ३ १ २ ३ २ ३ २उ ३ १र २र
मघवञ्छग्धि तव तं न ऊतये विद्विषो विमृधो जहि ॥२५॥ पू० ३।२।९।२॥

शब्दार्थः—(इन्द्र) हे परमेश्वर ! (यतो भयामहे) जिस से हम भय को प्राप्त हों (ततो नो अभयं कृधि) उस से हम को निर्भय

कीजिये (मघवन्) हे ऐश्वर्ययुक्त प्रभो ! (तव) आप के (नः) हम लोगों की (ऊतये) रक्षा के लिये (तं शग्धि) उसे अभय करने को आप समर्थ हैं। हमारी याचना को पूर्ण कीजिये (मृधः) हिंसक (द्विषो विजहि) शत्रुओं को नष्ट कीजिये।

भावार्थः--हे सर्वशक्तिमन् प्रभो ! जहां २ से हमें भय प्राप्त होने लगे, वहां २ से हमें निर्भय कीजिये। हमें निर्भय करने को आप महासमर्थ हैं, इसलिये आप से ही हमारी प्रार्थना है कि हमारे बाहर के शत्रु और विशेष करके हमारे भीतर के काम क्रोधादि सर्व शत्रुओं का नाश कीजिये, जिस से हम निर्विघ्न होकर आप के ध्यानयोग में प्रवृत्त हुए मुक्ति को प्राप्त होवें ॥२५॥

३ २ ३ २   ३ १ २ ३   १ २   ३ १ २
कदाचन स्तरीरसि, नेन्द्र सश्चसि दाशुषे।
३ १र   २र३   २ ३ २र   ३ १ २ ३ १ २
उपोपेन्नु मघवन् भूय इन्नु ते दानं देवस्य
पृच्यते ॥२६॥ पू० ४।१।१।८॥

शब्दार्थः—(इन्द्र मघवन्) हे परम धनवान् परमेश्वर! आप (कदाचन स्तरीः न असि) कभी भी हिंसक नहीं हैं, किन्तु (दाशुषे) विद्या धनादि दान करने वाले के लिये (उप उप इत् नु) समीप समीप ही शीघ्र (सश्चसि) कर्मफल पहुँचाते हैं (देवस्य ते) प्रकाशयुक्त आप का (दानं भूय इत्) कर्मानुसारी दान पुनर्जन्म में भी (नु पृच्यते) निश्चय करके सम्बद्ध होता है।

भावार्थः—हे प्रभो! प्राणिमात्र के कर्मों का फल देने वाले आप हैं, कभी किसी के

कर्म को निष्फल नहीं करते, न किसी निर-पराध को दण्ड ही देते हैं। किन्तु इस जन्म और पुनर्जन्म में सब प्राणिवर्ग आप की व्यवस्था से कर्मानुसारी फल का भोगने वाला बनता है ॥ २६ ॥

३ २ ३ १ २ ३ २ ३ २ ३ १ २ ३ २ ३
त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्रं, हवे हवे सुहवं
२ ३ १ २ ३ २ ३ ३ २ ३ १ २ २ २ ३ २
शूरमिन्द्रम्। हुवे नु शक्रं पुरुहूतमिन्द्रमिदं
३ २ ३ १ २ ३ १ २
हविर्मघवा वेत्विन्द्रः ॥२७॥ पू० ४।१।५।२॥

शब्दार्थः—(त्रातारम् इन्द्रम्) पालक परमेश्वर (अवितारम् इन्द्रम्) रक्षक परमेश्वर (हवे हवे सुहवम्) जब जब पुकारें तब तब सुगमता से पुकारने योग्य (शूरम् इन्द्रम्) शूरवीर परमेश्वर (शक्रम्) शक्तिमान् (पुरुहूतम्) वेदों में सब से अधिक पुकारे गए (इन्द्रम् हुवे)

ऐसे परमेश्वर को मैं पुकारता हूं। (मघवा इन्द्रः) अनन्त धन वाला परमेश्वर (इदम् हविः) इस पुकार को (नु वेतु) शीघ्र जाने।

भावार्थः—आप प्रभु सब के रक्षक और पालक हैं, आप की भक्ति बड़ी सुगमता से हो सकती है, वेदों में आप की भक्ति, उपासना करने के लिये बहुत ही उपदेश किये गये हैं। जो भाग्यशाली आप की भक्ति प्रेम पूर्वक करते हैं, उन की प्रार्थनारूप पुकार को अति शीघ्र सुन कर उन की सब कामनाओं को आप पूर्ण करते हैं॥ २७॥

१ २ ३ १र २र ३ २ ३ १ २
गायन्ति त्वा गायत्रिणोऽर्चन्त्यर्कमार्किणः।
३ १ २ ३ २ ३ १ २
ब्रह्माणस्त्वा शतक्रत, उद्वंशमिव येमिरे॥२८॥

पू० ४।२।६।१॥

शब्दार्थः—(शतक्रतो) हे अनन्तकर्म और उत्तम ज्ञानयुक्त प्रभो! (गायत्रिणः) गाने में कुशल (त्वा गायन्ति) आप का गान करते हैं, (अर्किणः) पूजा में चतुर (अर्चन्ति) आप को ही पूजते हैं (ब्रह्माणः) वेदज्ञाता यज्ञादि क्रिया में कुशल (वंशम् इव) जैसे अपने कुल को (उद् येमिरे) उद्यम वाला करते हैं ऐसे आप की ही प्रशंसा करते हैं।

भावार्थः—हे प्रभो! जैसे आप के सच्चे पूजक, वेद विद्या को पढ़कर अच्छे अच्छे गुणों के साथ अपने और औरों के वंश को भी पुरुषार्थी करते हैं, वैसे अपने आप को भी श्रेष्ठ गुणयुक्त और पुरुषार्थी बनाते हैं। जो पुरुष आप से भिन्न पदार्थ की पूजा वा उपासना करते हैं, उन को उत्तम फल कभी

प्राप्त नहीं हो सकता, क्योंकि आप की ऐसी कोई आज्ञा नहीं है कि, आप के समान कोई दूसरा पदार्थ पूजन किया जावे, इसलिये हम सब को आप की ही पूजा करनी चाहिये ॥२८॥

१ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ ३
अर्चत प्रार्चता नरः, प्रियमेधासो अर्चत ।
१ २ ३ २ ३ २ ३ ३ २ ३ क २ र
अर्चन्तु पुत्रका उत, पुरमिद् धृष्णवर्चत ॥२९॥

पू० ८।२।४।३॥

शब्दार्थः—(नरः प्रियमेधासः) हे पञ्च-महायज्ञादि उत्तम कर्मों से प्यार करने वाले मनुष्यो ! (पुरम्) भक्त जनों के सब मनोरथों को पूर्ण करने वाले (उत) और (धृष्णु) सब को दबा सकने और आप किसी से न दबने वाले प्रभु का (अर्चत अर्चत प्रार्चत) यजन करो, यजन करो, विशेष करके यजन करो ।

(पुत्रकाः) हे मेरे परम प्यारे पुत्रो! (अर्चन्तु) यजन करो,(इत्) अवश्य (अर्चत)यजन करो।

भावार्थः—कृपासिन्धो भगवन्! आप कितने अपार प्यार और कृपा से हमें वारंवार उपदेश अमृत से तृप्त करते हैं कि, हे पुत्रो! तुम पञ्चमहायज्ञादि उत्तम कर्मों से प्यार करो, मैं जो तुम्हारा सदा का सच्चा पिता हूँ, उस का सच्चे मन से पूजन करो। मैं समर्थ हूँ तुम्हारी सब कामनाओं को पूरा करूंगा, इस मेरे सत्य वचन में दृढ़ विश्वास करो, कभी सन्देह न करो ॥२९॥

२ ३ २ ३ १२३ १२३ २ ३ १२
एतोन्विन्द्रं स्तवाम, सखायः स्तोम्यं नरम्।
३ १र २र ३ २उ ३ २
कृष्टीर्यो विश्वा अभ्यस्त्येक इत् ॥३०॥

पू० ४।२।१०।७॥

शब्दार्थः—(सखायः) हे मित्रो ! (एत उ) आओ आओ (य एक इत्) जो परमेश्वर एक ही (विश्वाः कृष्टीः) सब मनुष्यों को (अभ्यस्ति) तिरस्कृत (शासित)करने में समर्थ है (स्तोभ्यम् नरम्) स्तुति योग्य सबके नायक (इन्द्रम् नु स्तवाम) परमेश्वर की शीघ्र हम स्तुति करें।

भावार्थः—हे प्यारे मित्रो ! आओ, आओ हम सब मिलकर उस सर्वशक्तिमान्, सब के नियन्ता एक प्रभु की शीघ्र स्तुति करें, हमारा शरीर क्षण भङ्गुर है, ऐसा न हो कि हमारे मन की मन में रह जाय, इसलिये प्राकृत पदार्थों में अत्यन्तासक्ति न करते हुए, उस स्तुति योग्य सब के स्वामी जगदीश्वर की स्तुति प्रार्थना उपासना में, अपने मन को लगाकर शान्ति को प्राप्त होवें ॥३०॥

१ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ २ ३ २
इन्द्राय साम गायत विप्राय बृहते बृहत् ।
१ २ ३ १ २ ३ १ २
ब्रह्मकृते विपश्चिते पनस्यवे ॥ ३१॥

पू० ४।२।१०।८॥

शब्दार्थः—(ब्रह्मकृते विपश्चिते) सब मनुष्यों के लिये वेदों को उत्पन्न करनेवाला ज्ञानस्वरूप और ज्ञान प्रदाता (विप्राय बृहते) मेधावी सर्वज्ञ और महान् (पनस्यवे) पूजनीय (इन्द्राय) परमेश्वर के लिये (बृहत् साम गायत) बड़ा साम गान करो ।

भावार्थः—हे सुज्ञजनो ! जिस दयामय जगत्पिता ने हमारे लिये धर्म आदि चार पुरुषार्थों के साधक वेदों को उत्पन्न किया, ऐसा ज्ञानस्वरूप, ज्ञानदाता, महान् जो परम पूजनीय परमात्मा है, उस प्रभु को हम अनन्य

भक्ति करें । इसी जगत्पिता की कपट छला-दिकों को त्याग कर वैदिक और लौकिक स्तोत्रों से यही स्तुति करें, जिससे हमारा जीवन पवित्र और जगत् के उपकार करने वाला हो ॥३२॥

विश्वतोदावन्विश्वतो न आभर ।
यं त्वा शविष्ठमीमहे ॥३२॥पृ० ५।२।६।१॥

शब्दार्थः—(विश्वतोदावन्) हे सब ओर से दान करने वाले प्रभो ! (नः विश्वतः आभर) हमारा सब ओर से पालन पोषण करो, (यं त्वा शविष्ठम्) जिस आप अत्यन्त बलवान् को (ईमहे) हम याचना करते हैं ।

भावार्थः—हे प्रभो ! आपही सब को सब पदार्थ देने वाले हो, आपके द्वार पर सब

याचना करने वाले हैं, आपही सब बलियों में महाबलवान् हो, आपके सेवक हम लोग भी आपसे ही मांगते हैं। हमारा सब का हृदय आपके ज्ञान और भक्ति से भरपूर हो, व्यवहार में भी हमारा अन्न वस्त्र आदिकों से पालन पोषण करो। हमारे सब देश भाई, भोजन वस्त्र आदिकों की अप्राप्ति से कभी दुःखी न हों सदा सब सुखी रहें, ऐसी कृपा करो ॥३२॥

२ ३   २ ३   १ २ १   ३ १ २ ३
सदा गावः शुचयो विश्वधायसः ।
१ २ ३ १ २ ३ १ २
सदा देवा अरेपसः ॥३३॥   पू० ५।२।६।६॥

शब्दार्थः—हे परमात्मन्! (विश्वधायसः) जो उत्तम पुरुष संसार में सब सुपात्रों को अन्नवस्त्रादि दान से धारण पोषण करते हैं,

(अरेपसः) पापाचरण नहीं करते (देवाः) दानादि दिव्यगुणयुक्त पुरुष हैं, वे (सदा शुचयः) सदा पवित्र रहते हैं, जिस प्रकार (गावः) गौएं सदा शुद्ध रहती हैं।

भावार्थः—हे प्रभो जो तेरे सच्चे भक्त हैं, वे अपने तन मन धन को, सुपात्र विद्वान जितेन्द्रिय परोपकारी महात्माओं की सेवा में लगा देते हैं। वस्तुतः ऐसे दानशील और पापाचरण से रहित सदा पवित्र, आप प्रभु के भक्त ही देव कहलाने के योग्य हैं। जैसे गौ वा सूर्य, किरणें वा वेद वाणी वा नदियों के पवित्र जल, ये सब पवित्र हैं और इनको पर उपकार के लिये ही आपने रचा है; ऐसे ही आप के भक्त भी पर उपकार के लिये ही उत्पन्न हुए हैं ॥२३॥

सोमः पवते जनिता मतीनां जनिता दिवो
जनिता पृथिव्याः। जनिताग्नेर्जनिता सूर्यस्य
जनितेन्द्रस्य जनितोत विष्णोः ॥ ३४ ॥

पू० ६।१।४।५॥

शब्दार्थः—(सोमः) सकल जगत् उत्पादक, सत्कर्मों में प्रेरक, शान्त-स्वरूप अन्तर्यामी परमात्मा जो कि (मतीनां जनिता) बुद्धियों का उत्पादक (दिवो जनिता) द्युलोक का उत्पादक (पृथिव्याः जनिता) पृथिवी का उत्पादक (अग्नेः जनिता) अग्नि का उत्पादक (सूर्यस्य जनिता) सूर्य का उत्पादक (इन्द्रस्य जनिता) विजुली का उत्पादक (उत विष्णोः जनिता) और यज्ञ का उत्पादक है (पवते)

ऐसा प्रभु धार्मिक विद्वान् महात्माओं को प्राप्त होता है।

भावार्थ:—पृथिवी सूर्य आदि सब लोक लोकान्तर सब ब्रह्माण्डों को उत्पन्न करने वाला महासमर्थ प्रभु, अपने प्यारे धार्मिक और पर उपकारी योगी भक्तजनों को प्राप्त होते हैं, अन्य को नहीं ॥३४॥

उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं विमध्यमं श्रथाय। अथादित्य व्रते वयन्तवानागसो अदितये स्याम ॥३५॥ पू० ६।३।१०।४॥

शब्दार्थ:—(आदित्य वरुण) हे सूर्यवत् प्रकाशमान् अविनाशी सर्व श्रेष्ठगुणसम्पन्न प्रभो! (अस्मत्) हम से (उत्तमम् मध्यमम् अधमम्

पाशम्) उत्तम मध्यम और निकृष्ट इन तीन प्रकार के बन्धनों को (उत् अव विश्रथाय) शिथिल कर दीजिये, (अथ वयम्) और हम लोग (तव व्रते) आप के नियम पालन में (अदितये) दुःख और नाश रहित होने के लिये (अनागसः स्याम) निरपराध होवें।

भावार्थः—हे प्रकाशस्वरूप अविनाशी सत्यकामादि दिव्यगुण-युक्त प्रभो ! जो तेरी प्राप्ति और तेरी आज्ञा पालन में कठिन से कठिन वा साधारण बन्धन हो उसे दूर करो। आप की सृष्टि के नियम, जो हमारे कल्याण के लिये ही आपने बनाये हैं, उनके अनुसार हमारा जीवन हो। उन नियमों के पालने में हमें किसी प्रकार का दुःख वा हानि न हो।

हम सब अपराधों से रहित हुए तेरी भक्ति और तेरी आज्ञा पालन में समर्थ हों ॥३७॥

३ १ २ ३ २ ३ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १
अहमस्मि प्रथमजा ऋतस्य पूर्वं देवेभ्यो अमृ-
२ ३ १ २ २ ३ १ २ ३ २ ३ ३ १ २
तस्य नाम । यो मा ददाति स इदेवमाव-
३ २ ३ ३ १ २ ३ १ २
दहमन्नमन्नमदन्तमद्मि॥३८॥ पू०६।३।१०।९॥

शब्दार्थः—(अहं देवेभ्यः प्रथमजाः अस्मि) मैं वायु बिजली आदि देवों से पूर्व ही विद्यमान हूं और (ऋतस्य अमृतस्य नाम) सच्चे अमृत का टपकाने वाला हूं। (यः मा ददाति) जो पुरुष मेरा दान करता है (स इत्) वही (एवम् आवत्) ऐसे प्राणियों की रक्षा करता है और जो किसी को न देकर आपही खाता है (अन्नम् अदन्तम्) उस अन्न खाते हुए

को (अहम् अन्नम् अद्मि) मैं अन्न खा जाता हूं अर्थात् नष्ट कर देता हूं।

भावार्थः—परमेश्वर उपदेश देते हैं कि, हे मनुष्यो ! जब वायु आदि भी नहीं उत्पन्न हुए थे तब भी मैं वर्तमान था, मैं ही मोक्ष का दाता हूं, जो आप ज्ञानी होकर दूसरों को उपदेश करता है, वह अपनी और प्राणियों की रक्षा करता हुआ पुरुषार्थ भागी होता है जो अभिमानी होकर दूसरों को उपदेश नहीं करता, उसका मैं नाश कर देता हूं। दूसरे पक्ष में अलंकार की रीति से अन्न कहता है कि मैं ही सब देवों से प्रथम उत्पन्न हुआ हूं जो पुरुष महात्मा अतिथि आदिकों को देकर खाता है, वह अपनी रक्षा करता है। जो असुर, केवल अपना ही पेट भरता है, अतिथि

आदिकों को अन्न नहीं देता, उस कृपण नास्तिक दैत्य का मैं नाश कर देता हूं ॥३६॥

उपास्मै गायता नरः पवमानायेन्दवे ।
अभि देवां इयक्षते ॥३७॥ उ० १।१।१।

शब्दार्थः—(नरः) हे मनुष्यो ! (अस्मै-पवमानाय) इस पवित्र करने वाले (इन्दवे) परमेश्वर (देवान् अभि इयक्षते) विद्वानों को लक्ष्य करके, अपना यजन करना चाहते हुए के लिये (उपगायत) उपगान करो ।

भावार्थः—हे प्रभो ! जैसे कोई धर्मात्मा दयालु पिता, अपने पुत्र के लिये, अनेक उत्तम वस्तुओं का संग्रह करके, मन में चाहता है कि, मेरा पुत्र योग्य बन जाय, तब मैं इस को उत्तम वस्तुओं को देकर सुखी करूं । ऐसे

ही आप पतित पावन परम दयालु जगत्पिता भी चाहते हैं कि, यह मेरे पुत्र, धर्मात्मा हो कर मेरा ही पूजन करें, तव मैं अपने प्यारे इन पुत्रों को अपना यथार्थ ज्ञान देकर, मोक्षादि अनन्त सुख का भागी वनाऊं ॥३७॥

१ २ ३ २उ ३ १ २र३ १ २र

स नः पवस्व शं गवे शं जनाय शमर्वते ।

१ २ ३ १ २

शं राजन्नोषधीभ्यः ॥३८॥ उ०।१।१।१।

शब्दार्थः—(राजन्) हे प्रकाशमान् प्रभो ! (स नः) वह आप हमारे (गवे शं पवस्व) गौ अश्वादि पशुओं के लिये सुख की वर्षा कर (शं जनाय) हमारे पुत्र भ्राता आदिकों के लिये सुख वर्षा। (अर्वते शम्) हमारे प्राण के लिये सुख वर्षा। (ओषधीभ्यः शम्) हमारी गेहूं, चावल आदि ओषधियों के लिये सुख वर्षा।

भावार्थः—हे महाराजाधिराज परमात्मन् ! आप हमारे लिये गौ, अश्वादि उपकारक पशुओं को देते और उन पशुओं को सुखी करते हुए हमारी रक्षा करें। ऐसे ही हमारी पुत्र, पौत्रादि सन्तान तथा हमारे प्राण सुखी रहें, और हमारे लिये गेहूं चावल आदि उत्तम अन्न उत्पन्न कर हमें सदा सुखी करें ॥३८॥

तं त्वा समिद्भिरंगिरो घृतेन वर्धयामसि ।
बृहच्छोचा यविष्ठ्य ॥३९॥ उ०।१।१।४॥

शब्दार्थः—(अङ्गिरः) हे प्रकाशमान् (यविष्ठ्य) अति बल युक्त प्रभो ! (तं त्वा) वेदों में प्रसिद्ध आप को (समिद्भिः) ध्यान आदि साधनों से तथा (घृतेन) आप में स्नेह प्रेम-भक्ति से (वर्धयामसि) अपने हृदय में

प्रत्यक्ष जानें और आप (बृहत् शोच) बहुत प्रकाश करें।

भावार्थः—हे परमात्मन्! जो आपके प्यारे भक्तजन, अपने हृदय में आपकी प्रेम पूर्वक भक्ति उपासना में तत्पर हैं, उनको ही आप का यथार्थ ज्ञान होता है, उनके हृदय में ही आप अच्छी तरह से प्रकाशित हुए, अविद्यादि अन्धकार को नष्ट कर उन्हें सुखी करते हैं, आपकी भक्ति के बिना तो प्रकृति में फंस कर आप की वैदिक आज्ञा से विरुद्ध चलते हुए, मूर्ख संसारी लोग, अनेक नीच योनियों में भटकते २ सदा दुःखी ही रहते हैं ॥३९॥

१ २ ३२उ ३ १ २
त्वं न इन्द्रवाजयुस्त्वं गव्युः शतक्रतो।
१ २ ३१२
त्वं हिरण्ययुर्वसो ॥४०॥ उ० १।२।२॥

शब्दार्थः—(इन्द्र) हे परमेश्वर! (त्वं नः) आप हमारे लिये (वाजयुः) अन्न की इच्छा वाले हो (शतक्रतो) हे अनन्तज्ञान और अनन्त शोभनीय कर्म वाले प्रभो! (त्वं गव्युः) आप हमारे लिये गौ आदि उपकारक पशुओं को इच्छा वाले और (वसो) हे सब में वसने और सब को अपने में वास देने वाले सर्वाधिष्ठान परमात्मन्! (त्वं हिरण्ययुः) आप हमारे लिये सुवर्णादि धन चाहने वाले हूजिये।

भावार्थः—हे जगत्पते परमेश्वर! आप हमारे और हमारे देशी सब भ्राताओं के लिये गेहूं चावल आदि अन्न, गौ अश्व आदि उपकारक पशु, सुवर्ण चान्दी आदि धन की इच्छा वाले हूजिये। किसी वस्तु की न्यूनता से हम सब दुःखी वा दरिद्री न रहें, किन्तु

हमारे सब प्राण, सब प्रकार के सुखों से सम्पन्न हुए निश्चिन्त होकर आपकी भक्ति में अपने कल्याण के लिये लग जायें ॥४०॥

३ १ २ ३ २ ३ २ ३ १र २र
इच्छन्ति देवाः सुन्वन्तं न स्वप्नाय स्पृहयन्ति।
१ २ ३ २ ३ १ २
यन्ति प्रमादमतन्द्राः ॥४१॥ उ० ।१।२।३॥

शब्दार्थः—हे प्रभो ! (देवाः) विद्वान् लोग (सुन्वन्तम्) अपना साक्षात् कराते हुए आपकी (इच्छन्ति) इच्छा करते हैं (स्वप्नाय न स्पृहयन्ति) निद्रा के लिये इच्छा नहीं करते, (अतन्द्राः) निरालस होकर (प्रमादम् यन्ति) अत्यन्त आनन्द को प्राप्त होते हैं ।*

*इस मन्त्र का यह अर्थ भी है—देवता रस निचोड़ने वाले को चाहते हैं, सोने वाले की इच्छा नहीं करते। उद्यमी विशेष आनन्द को पाते हैं। (सम्पादक)

भावार्थ:—हे जगदीश्वर ! आप वेद द्वारा हमें उपदेश दे रहे हैं कि, हे मेरे प्यारे पुत्रो ! आप लोगों को योग्य है कि, अति निद्रा, आलस्य, विषयासक्ति आदि, मेरी भक्ति और ज्ञान के विघ्नों को जीत कर, मेरी इच्छा करो। क्योंकि, अति निद्राशील आलसी और विषयासक्तों को मेरी भक्ति वा ज्ञान नहीं हो सकता, इस लिये इन सब विघ्नों को दूर कर, मेरी वैदिक आज्ञा के अनुकूल अपना जीवन पवित्र बनाते हुए सदा सुखी रहो ॥४१॥

३ १ २ ३ २ ३ १ २
सख्ये त इन्द्र वाजिनो मा भेम शवसस्पते।
२ ३ १ २र ३ १ २३१२
त्वामभिप्रनोनुमो जेतारमपराजितम् ॥४२॥

उ० २।१।१९॥

शब्दार्थ:—हे इन्द्र ! (ते सख्ये) आप

की मैत्री में हम (वाजिनः) अन्न और बल-युक्त हुए (मा भेम) किसी से न डरें। (शवसस्पते) हे बलपते ! (जेतारम्) सब को जीतने वाले (अपराजितम्) और किसी से भी न हारने वाले (त्वाम् अभिप्रनोनुमः) आपको हम वारंवार प्रणाम और आपकी ही स्तुति करते हैं।

भावार्थः—हे दयासिन्धो भगवन् ! जो आप की शरण आते हैं, उनको किसी प्रकार का भय नहीं प्राप्त होता, क्योंकि आप महाबली और सब को जीतने वाले हैं, तो आप की शरण में आए भक्तों को डर किस का रहा, इसलिये अभय पदकी इच्छा वाले हम को इस लोक और परलोक में अभय कीजिये ॥४२॥

३ २ ३ १२ ३ १ २ ३ २
पुनानो देववीतय इन्द्रस्य याहि निष्कृतम्।
३ २ ३ १ २ ३ २
द्युतानो वाजिभिर्हितः ॥४३॥ ॥उ०।२।२।४॥

शब्दार्थ:—हे शान्तिदायक प्रभो ! (पुनानः) अपवित्रों को पवित्र करने वाले (द्युतानः) प्रकाश करने वाले (वाजिभिः) प्राणायामों के साथ (हितः) ध्यान किये हुए आप (देववीतये) विद्वान् भक्तों को प्राप्त होने के लिये (इन्द्रस्य) इन्द्रियों के अधिष्ठाता जीव के (निष्कृतम्) शुद्ध किये हुए अन्तःकरण स्थान में (याहि) साक्षात् रूप से प्राप्त हूजिये।

भावार्थ:—हे शुद्धस्वरूप परमात्मन् ! आप शरणागत अपवित्रों को भी पवित्र करने और अज्ञानियों को भी ज्ञान का प्रकाश देने वाले

हो, प्राणायाम, धारणा ध्यानादि साधनों से जो आपके विद्वान् भक्त, आपके साक्षात् करने के लिये प्रयत्न करते हैं, उनके शुद्ध अन्तः-करण में प्रत्यक्ष होते हो ॥४३॥

१२ २र ३ १२३ १र २
त्वमिन्द्राभिभूरसि त्वं सूर्य्यमरोचयः ।
३ १ २ ३१२ ३ १ २
विश्वकर्मा विश्वदेवो महां असि ॥४४॥

उ० ३।२।२२॥

शब्दार्थः—हे (इन्द्र) परमेश्वर ! (त्वम् अभिभूः असि) आप सब (पर शासन करने) को दबा सकने वाले हो (त्वम् सूर्यम् अरोचयः) आप ही सूर्य को प्रकाश देते हो (विश्वकर्मा) सब जगतों के रचने वाले (विश्वदेवः) सब के प्रकाशक देव और (महान् असि) सर्वव्यापी महादेव हैं ।

भावार्थः—हे परमात्मन् ! आप सर्वशक्तिमान् होने से सब को दबाने वाले हैं। सूर्य, चन्द्र, अग्नि, विद्युत् आदि सब प्रकाशकों के प्रकाशक भी आप हैं, आपके प्रकाश के विना, यह सूर्य आदि कुछ भी प्रकाश नहीं कर सकते, इसलिये आप को ज्योतियों का ज्योति सच्छास्त्रों में वर्णन किया है। सब ब्रह्माण्डों के रचने वाले और सूर्य आदि सब देवों के देव होने से आप महादेव हैं ॥४४॥

३ २ ३ १ २ ३ २ १ ३ ३
विभ्राजञ्ज्योतिषा स्वाऽ३ऽरगच्छो रोच-
२ ३ २ ३ १ २ ३ १ २
नन्दिवः। देवास्त इन्द्र सख्याय येमिरे॥४५॥

उ० ।३।२।२२॥

शब्दार्थः—हे इन्द्र ! (ज्योतिषा विभ्राजत्) आप अपने ही प्रकाश से संपूर्ण जगत् को

प्रकाशित करते हुए (दिवः रोचनम्) ऊपर के द्युलोक को भी प्रकाश कर रहे हैं (स्वः अगच्छः) और अपने आनन्द स्वरूप को प्राप्त हो रहे हैं (देवाः ते सख्याय) विद्वान् लोग आप की मित्रता वा अनुकूलता के लिये (येमिरे) प्रयत्न करते हैं।

भावार्थः—हे इन्द्र परमेश्वर! आप अपने ही प्रकाश से ऊपर के द्युलोक आदि तथा नीचे के पृथिवी आदि लोकों को प्रकाश कर रहे हैं। आप आनन्द स्वरूप हैं, आप के परम प्यारे और आप के ही अनन्यभक्त विद्वान् देव, आप के साथ गाढ़ी मित्रता के लिये सदा प्रयत्न करते हैं, आप के मित्र बन कर मृत्यु से भी न डरते हुए, आप के स्वरूप-भूत आनन्द को प्राप्त होते हैं ॥४५॥

१र २र ३ १ २ ३ २ ३ १ २
त्वं हि नः पिता वसो त्वं माता शतक्रतो
३ १ २ १ २ ३ १ २
वभूविथ । अथा ते सुम्नमीमहे ॥ ४६ ॥

उ० ४।२।१३॥

शब्दार्थः—हे (वसो) अन्तर्यामी रूप से सब में वास करने वाले प्रभो! (शतक्रतो) हे जगतों के उत्पत्ति स्थिति प्रलय आदिकर्तः ! (त्वं हि नः पिता) आप ही हमारे पालक और जनक हैं (त्वं माता) हमारी मान करने वाली सच्ची माता भी आप ही (वभूविथ) थे और अब भी हैं, (अथ) इसलिये आप से ही (सुम्नम्) सुख को (ईमहे) हम मांगते हैं।

भावार्थः—हमें योग्य है कि जिस वस्तु की इच्छा हो आप से मांगें। आप अवश्य देंगे, क्योंकि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड हमारे लिये ही आपने

वनाये हैं । आप तो आनन्द-स्वरूप हो किसी पदार्थ की भी अपने लिये कामना नहीं करते, यदि कोई वस्तु मांगने पर भी हमें नहीं देते, तो वह वस्तु हमें हानि करने वाली है, इसलिये नहीं देते । हम सब को जो सुख मिले और मिल रहे हैं, वह सब आप की कृपा है, हम आपकी भक्ति में मग्न रहेंगे तो, कोई ऐसा सुख नहीं, जो हमें न मिल सके॥४६॥

१ २ ३ २ ३ १ २
त्वां शुष्मिन्पुरुहूत वाजयन्तमुपब्रुवे सहस्कृत ।
१ २ ३ १ २
स नो रास्व सुवीर्यम् ॥४७॥ उ० ४।२।१३॥

शब्दार्थ:—(शुष्मिन्) हे बलवान् प्रभो ! (पुरुहूत) बहुतों से पुकारे गये (सहस्कृत) बल देने वाले (वाजयन्तं त्वाम्) बल देते हुए आप की (उपब्रुवे) मैं स्तुति करता हूँ

(स नः) वह आप हमारे लिये (सुवीर्यम् रास्व) उत्तम बल का दान करो।

भावार्थः—हे महाबलिन् बलप्रदातः! हम आप के भक्त आपकी ही उपासना करते हैं, आप कृपा कर हमें आत्मिक बल दो, जिससे हम लोग, काम क्रोध आदि दुःखदायक शत्रुओं को जीत कर, आपकी शरण में आवें। आपकी शरण में आकर ही हम सुखी हो सकते हैं, आपकी शरणमें आये बिना तो, न कभी कोई सुखी हुआ और न होगा॥

१ २ ३ २ ३ १ २ ३ १र २र
त्वं यविष्ठ दाशुषो नॄँः पाहि शृणुही गिरः।
१ २ ३ २ ३ १र २र
रक्षा तोकमुतत्मना ॥४८॥ उ०५।१।१८॥

शब्दार्थः—(यविष्ट) हे अत्यन्त बल-युक्त प्रभो! (दाशुषः) दान शील (नॄन् पाहि) मनुष्यों की रक्षा कीजिये (गिरः शृणुहि) उनकी

प्रार्थना रूपी वाणियों को सुनिये (उत तोकम्) और उन के पुत्रादि सन्तान की (त्मना रक्षा) अपने अनन्त सामर्थ्य से रक्षा कीजिये।

भावार्थ:—हे सर्व शक्तिमन् जगदीश्वर! आप कृपा कर, दान-शील धर्मात्माओं की और उनके पुत्र पौत्रादि परिवार की रक्षा कीजिये, जिससे वे दाता धर्मात्मा परम प्रसन्न हुए, सुपात्रों को अनेक पदार्थों का दान देते हुए संसार का उपकार करें और आप की कृपा के पात्र सच्चे प्रेमी भक्त बनकर दूसरों को भी प्रेमी भक्त बनावें ॥४८॥

२ ३ १ २ ३ १ २ ३ १२ २२ ३ २ ३
इन्द्रमीशानमोजसाभिस्तोमैरनूषत। सहस्रं
१ २ ३१२ ३२ ३ २ ३ १ २
यस्य रातय उत वा सन्ति भूयसीः ॥४९॥

उ०५।१।२०॥

शब्दार्थः—हे मनुष्यो! आप लोग (ओजसा ईशानम् इन्द्रम्) अपने अद्भुत बल से सब पर (शासन) हकूमत करने वाले महा ऐश्वर्य-वान् प्रभु की (स्तोमैः) स्तुति बोधक वेद-मन्त्रों से (अभि अनूपत) सर्व प्रकार से स्तुति करो, (यस्य सहस्रम्) जिस प्रभु के हज़ारों (उत वा भूयसीः) अथवा हज़ारों से भी अधिक (रातयः सन्ति) दिये हुए दान हैं।

भावार्थः—जिस दयालु ईश्वर के दिये हुए शुद्ध वायु, जल, दुग्ध, फल, फूल, वस्त्र, अन्न आदि हज़ारों और लाखों पदार्थ हैं, जिनको हम निशि दिन उपभोग में ले रहे हैं, इसलिये हमें योग्य है कि उस परम पिता जगदीश की, पवित्र वेद के मन्त्रों से हम सदा स्तुति

करें और उसी को अनेक धन्यवाद देवें, जिस से हमारा कल्याण हो ॥४९॥

३　१　२　३१२　२२　३　१२
उपप्रयन्तो अध्वरं मन्त्रं वोचेमाग्नये ।
३२　३　१　२　३२
आरे अस्मे च शृण्वते ॥५०॥उ० ६।२।१॥

शब्दार्थः—(अध्वरम्) हिंसा रहित यज्ञ के (उपप्रयन्तः) समीप जाते हुए हम (आरे) दूरस्थों की (च) और (अस्मे) समीपस्थों की (शृण्वते अग्नये) सुनते हुए ज्ञान स्वरूप परमेश्वर के लिये (मन्त्रं वोचेम) स्तुतिरूप मन्त्र को उच्चारण करें ।

भावार्थः—हे विभो ! हम से दूरवर्त्ती और समीपवर्त्ती सब प्राणिमात्र की पुकार को, आप सदा सुनते हैं, इसलिये हम सब को योग्य है कि, आप के रचे वेदों के पवित्र स्तुतिरूप सूक्त

और मन्त्रों का, वाणी से पाठ, यज्ञ होमादिकों के आरम्भ में अवश्य किया करें और मन से आप का ही ध्यान और उपासना सदा किया करें॥५०॥

१ २ ३ २ ३ १ २ ३१ ३ १ २ ३ १ २
इन्द्र शुद्धो न आगहि शुद्धः शुद्धाभिरूतिभिः।
३ २ ३१२ २२ ३ १ २
शुद्धो रयिन्निधारय शुद्धो ममद्धि सोम्य॥५१॥

उ० ६।२।९॥

शब्दार्थः—हे इन्द्र परमेश्वर! (शुद्धः नः आगहि) सदा पवित्र स्वरूप हम आप को प्राप्त होवें। (शुद्धः शुद्धाभिः ऊतिभिः) पावन आप अपनी पावनी रक्षाओं से हमारी रक्षा करें। (शुद्धः रयिम् निधारय) पावन आप निष्कपट व्यवहार से प्राप्त पवित्र धन को धारण करावें। (सोम्य) हे अमृतस्वरूप प्रभो! (शुद्धः ममद्धि) पावन आप हम पर प्रसन्न होवें॥

भावार्थः—हे दीनदयालो भगवन्! आप सदा पवित्र स्वरूप और पवित्र करने वाले हो, हम को पवित्र बनाओ। खान पान आदि व्यवहार के लिये हमें पवित्र धन दो, जिससे हम पवित्र रहते हुए आप के प्यारे सच्चे भक्त बनें और अपने सहवासी भाईओं को भी पवित्र सच्चे भक्त बनाते हुए सदा सुखी रहें ॥ ५१ ॥

१ २ ३ १र २र ३ २ ३ १र २र ३ १ २
इन्द्र शुद्धो हि नो रयिं शुद्धो रत्नानि दाशुषे।
३ २ १ २ ३ १र २र
शुद्धो वृत्राणि जिघ्नसे शुद्धो वाजं सिषाससि।

५२॥ उ० ६।२।९॥

शब्दार्थः—हे इन्द्र! (शुद्धः हि) जिससे आप पावन हैं, इसलिये (रयिम् नः) हमें पवित्र धन दो। (शुद्धः) आप पवित्र हैं,

(दाशुषे रत्नानि) दानी पुरुष के लिये पवित्र स्वर्ण, रजत, मणि, मुक्ता आदि रत्न दो। (शुद्धः) आप शुद्ध हैं, इसलिये (वृत्राणि जिघ्नसे) अशुद्ध दुष्ट राक्षसों को नाश करते हैं, (शुद्धः वाजम् सिषाससि) और पवित्र आप पवित्र अन्न को प्राणी के कर्म के अनुसार देना चाहते हैं।

भावार्थः—हे पतित पावन भगवन्! आप पावन हैं हमें पवित्र धन दो, पुण्यात्मा, दानशील, धर्मात्माओं के लिये भी पवित्र मणि, हीरक, मुक्ता आदि रत्न दो। आप सदा पवित्र स्वरूप हैं, अपवित्र दुष्ट पापी राक्षसों का नाश कर जगत् में पवित्रता फैला दो। अपने प्यारे भक्तों को पवित्र अन्न आदि दिया चाहते और उनको पवित्रात्मा बनाते हैं॥५२॥

३ २ ३ २ ३ २ २ १ २ ३१ २
अद्याद्या श्वःश्व इन्द्र त्रास्व परे च नः ।
१ २ ३१ २ ३ २ ३ २ ३ १ २
विश्वा च नो जरितॄन्त्सत्पते अहा दिवा नक्तं
च रक्षिषः ॥५३॥ उ० ६।३।७॥

शब्दार्थः—(सत्पते) हे सत्पुरुषों के रक्षक और पालक (इन्द्र) परमेश्वर ! (नः) हमारी (अद्य अद्य) आज २ और (श्वःश्वः) कल्ह २ (परे) और परले दिन ऐसे ही (विश्वा अहा) सब दिन (त्रास्व) रक्षा करो (च) और (नः जरितॄन्) हम आप की स्तुति करने वालों की (दिवा च नक्तं रक्षिषः) दिन में और रात्रि में भी सदा रक्षा कीजिये ।

भावार्थः—हे सत्पुरुष महात्माओं के रक्षक और पालक इन्द्र ! आप हमें श्रेष्ठ बनाओ,

हमारी सब दिन और रात्रि में सदा रक्षा करो, आप से सुरक्षित होकर, आप के भजन स्मरण स्तुति प्रार्थना में और आप के वेद प्रचार में हम लग जावें, जिससे कि हमारा और हमारे सब भ्राताओं का कल्याण हो ॥५३॥

३ १ २ ३ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २
उत नः प्रिया प्रियासु सप्त स्वसा सुजुष्टा ।
१२ ३ १ २
सरस्वती स्तोभ्याभूत् ॥५४॥३०।६।३।९॥

शब्दार्थः—(उत नः प्रियासु प्रिया) परमेश्वर की स्तुति के लिये हमारी प्यारियों से अति प्यारी मीठे रस युक्त (सप्तस्वसा) गायत्री आदि सात छन्दों जाति रूप वहनों वाली (सुजुष्टा) अच्छे प्रकार अभ्यास से सेवन की गई (स्तोभ्या सरस्वती भूत्) प्रशंसनीय वाणी होवे ॥

भावार्थः—हे वेदगम्य प्रभो! हम पर दया करो कि हमारी वाणी अतिप्रिय मधुर और वेदों के गायत्री आदि छन्द वाले सूक्त तथा मन्त्रों से अभ्यस्त और प्रशंसनीय हो। जब हम सब आप की स्तुति प्रार्थना करने लगें, तो आप की महिमा और स्वरूप के निरूपण करने वाले सैंकड़ों मन्त्र, हमारे कण्ठाग्र हों, उन के पाठ और अर्थ ज्ञान पूर्वक, हम आप की स्तुति प्रार्थना करें ॥५४॥

१र २र३ १२ ३ २३ १२ ३२ ३२ ३१
तदिदास भुवनेषु ज्येष्ठं यतो जज्ञे उग्रस्त्वेष
२ ३ १ २ ३ १र २र ३ २३२३
नृम्णः। सद्यो जज्ञानो निरिणाति शत्रूननु
२उ ३ २ ३ १ २
यं विश्वे मदन्त्यूमा ॥५५॥ उ० ६।३।१९॥

शब्दार्थः—(तत् भुवनेषु ज्येष्ठं इत् आस)

वह् प्रसिद्ध सब भुवनों में अत्यन्त बड़ा ब्रह्म ही था (यतः उग्रः) जिस ब्रह्म रूप निमित्त कारण से तेजस्वी(त्वेप नृम्णः)प्रकाश बल वाला सूर्य (जज्ञे) उत्पन्न हुआ, (जज्ञानः) उत्पन्न हुआ ही वह सूर्य (सद्यः) शीघ्र (शत्रून् निरिणाति) शत्रुओं को अत्यन्त नष्ट करता है (यम् अनु) जिस सूर्य के उदय होने के पश्चात् (विश्वे ऊमाः मदन्ति) सब प्राणी हर्ष पाते हैं।

भावार्थः—हे जगत्पितः ! जब यह संसार उत्पन्न भी नहीं हुआ था, तब सृष्टि के पूर्व भी आप वर्तमान थे। आप से ही यह महा-तेजस्वी तेजःपुञ्ज सूर्य उत्पन्न हुआ है, मनुष्य के जो शत्रु, सिंह, सर्प, वृश्चिक आदि विष-धारी जीव हैं, उनको यह सूर्य अपने उदय

मात्र से भगा देता है। ज्वर आदिकों के कारण जो सूक्ष्म जन्तु हैं, उनको मार भी डालता है। ऐसे सूर्य के उदय होने पर मनुष्य पशु, पक्षी आदि सब प्राणी बहुत ही प्रसन्न होते हैं ॥५५॥

२ २ ३ २ ३ २ ३ २ ३ १ २ ३ २
न ह्यां ३ऽग पुरा च न जज्ञे वीरतरस्त्वत्।
१ २ ३ २ ३ ३ २ ३ १ २
न की राया नैवथा न भन्दना ॥ ५६॥
उ० ७।१।८॥

शब्दार्थः—(अङ्ग) हे प्रिय इन्द्र ! (पुरा-चन) पूर्वकाल में तथा वर्त्तमान काल में भी (नकिः राया) न तो धन से (न एवथा) न रक्षा से (न भन्दना) और न स्तुत्यपन से, (त्वत् वीरतरः) आपसे अधिक अत्यन्त वीर पुरुष कोई (नहि जज्ञे) नहीं उत्पन्न हुआ।

भावार्थः—हे परम प्यारे जगदीश ! आप जैसा अत्यन्त बलवान् और पराक्रमी, न कोई पूर्वकाल में हुआ, न अब कोई है, और न होगा। आप सब की रक्षा करने वाले, सब धन के स्वामी और स्तुति के योग्य हैं। जो भद्र पुरुष, आप को ही महाबली, धन के मालिक और सब के रक्षक जानकर, आप की स्तुति प्रार्थना करते, और आप की वैदिक आज्ञा में चलते हैं, उनका ही जन्म सफल है ॥५६॥

त्वं जामिर्जनानामग्ने मित्रो असि प्रियः।
सखा सखिभ्य ईड्यः ॥५७॥ उ० ७।२।१॥

शब्दार्थः—(अग्ने) हे ज्ञानरूप ज्ञानप्रद प्रभो ! (त्वं जनानाम् जामिः) आप प्रजा

जनों के बन्धु (प्रियो मित्रः) सदा प्यारे मित्र (सखा) चेतनता से समान नाम वाले (सखिभ्यः ईड्यः असि) हम जो आप के सखा हैं उनसे आप सदा स्तुति के योग्य हैं।

भावार्थः—हे दयानिधे! आप हम सब के सच्चे बन्धु और अत्यन्त प्यार करने वाले मित्र हैं। संसार में जितने बन्धु वा मित्र हैं, वे सब अपने स्वार्थ के लिये बन्धु वा मित्र हैं, संसारी लोग जब स्वार्थ कुछ नहीं पाते, तब इनमें कोई हमारा बन्धु वा मित्र नहीं रहता। केवल एक आप ही हैं, जो बिना स्वार्थ के हम पर सदा अनुग्रह करते हुए, सदा बन्धु वा मित्र बने रहते हैं। इसलिये हम सब से आप ही सदा स्तुति के योग्य हैं अन्य कोई भी नहीं ॥९७॥

१ ३ ३ १र २र ३ २ ३ १ २ ३ १२
वृषो अग्निः समिध्यतेऽश्वो न देववाहनः ।
१ ३ १ २
तं हविष्मन्त ईडते ॥५८॥ उ० ७।२।२॥

शब्दार्थः—(वृषः) प्रभु सुखों की वर्षा करने वाले (उ) निश्चय (देववाहनः) पृथिवी, वायु आदि सब के आधार होने से वाहन (अश्वः) प्राण के (न) समान वर्तमान (अग्निः) ज्ञान स्वरूप परमेश्वर (समिध्यते) हृदय में अच्छे प्रकार प्रकाशित होता है (तम्) आप की (हविष्मन्तः ईडते) भक्ति रूपी भेंट वाले महात्मा लोग स्तुति करते हैं॥

भावार्थः—हे सर्वाधार परमात्मन्! आप ही पृथिवी वायु आदि सब देव और सब लोकों के आधार और सब के सुख दाता सब के जीवन के हेतु, प्राणवत् परम प्यारे,

सब के हृदय में अन्तर्यामी होकर वर्तमान हैं। हम सब को योग्य है कि ऐसे परम पूज्य परमदयालु जगत्पति आप की, अति प्रेम से भक्ति करें, जिस से हमारा सब का यह मनुष्य जन्म पवित्र और सफल हो ॥५८॥

१ २   ३ १ २ ३   १ २ ३   १ २
वृषणं त्वा वयं वृषन् वृषणः समिधीमहि ।
२ ३   १ २   ३ २
अग्ने दीद्यतं बृहत् ॥५९॥ उ० ७।२।२॥

शब्दार्थः—(वृषन्) हे कामना के पूरक अग्ने ! (वृषणः) तेरी भक्ति से नम्र और आर्द्रचित्त (वयम्) हम आप के सेवक (बृहत् दीद्यतम्) बहुत ही प्रकाशमान (वृषणम्) कामनाओं के पूरक (त्वाम् समिधीमहि) आप का अपने हृदय में ध्यान धरते हैं ॥

भावार्थः—हे ज्ञान स्वरूप ज्ञान प्रदातः ! आप अपने भक्तों की सब योग्य कामनाओं को पूर्ण करते हैं। हम आप के प्यारे बच्चे, नम्रता से आप की भक्ति करने के लिये, उपस्थित हुए हैं, आप का ही, अपने हृदय में ध्यान धरते हैं। आप हम पर कृपा करें कि, हमारा मन सब कल्पना को छोड़ आप के ही ध्यान में, अच्छे प्रकार लग जावे, जिससे हम को शान्ति और आनन्द प्राप्त हो ॥५९॥

३ १र २र ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २
मन्द्रं होतारमृत्विजं चित्रभानुं विभावसुम् ।
३ १ २ ३ १ २
अग्निमीडे स उ श्रवत् ॥६०॥ उ० ७।२।३॥

शब्दार्थः—(मन्द्रम्) हर्षदायक (होतारम्) कर्म फलप्रदाता (ऋत्विजम्) सब ऋतुओं में यजनीय पूजनीय (चित्रभानुम्)

विचित्र प्रकाशों वाले (विभावसुम्) अनेक प्रकार के प्रकाश के धनी ऐसे (अग्निम्) ज्ञानस्वरूप जगदीश्वर की (ईडे) मैं स्तुति करता हूँ (सः) वह प्रभु (उ) अवश्य (श्रवत्) मेरी की हुई स्तुति को सुने ॥

भावार्थः—मनुष्य मात्र को परमात्मा का यह उपदेश है कि, तुम लोग मेरी स्तुति प्रार्थना उपासना किया करो। जैसे पिता व गुरु अपने पुत्र वा शिष्य को उपदेश करते हैं कि, तुम पिता वा गुरु के विषय में इस प्रकार से स्तुति आदि किया करो, वैसे सब के पिता और परम गुरु ईश्वर ने भी, हम को अपनी अपार कृपा और प्यार से सब व्यवहार और परमार्थ का वेद द्वारा उपदेश किया है, जिससे हम सदा सुखी होवें।

इसलिये हम, उस आनन्द दायक और कर्म-फलप्रदाता सदा पूजनीय स्वप्रकाश परमात्मा की स्तुति करते हैं ॥६०॥

३१ २ ३ १२३१ २
इमम्मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृडय ।
१२३ १२ २२
त्वामवस्युराचके ॥६१॥ उ० ७।३।६॥

शब्दार्थः—(वरुण) हे सब से श्रेष्ठ परमात्मन् ! (अद्य) अब (अवस्युः) अपनी रक्षा और आप के यथार्थ ज्ञान की इच्छा वाला मैं (त्वाम् आचके) आप की सर्वत्र स्तुति करता हूँ (मे इमं हवम् श्रुधी) आप मेरी इस स्तुति समूह को सुन कर स्वीकार करो और (मृडय) हमें सुख दो ॥

भावार्थः—हे प्रभो ! जो आप के सच्चे प्रेमी भक्त हैं, उन की प्रेम पूर्वक की हुई

प्रार्थना को, आप सर्वान्तर्यामी, अपनी सर्वज्ञता से ठीक २ सुनते हैं। अपने प्यारे भक्तों पर प्रसन्न हुए, उनको अपना यथार्थ ज्ञान और सर्व सुख प्रदान करते हैं। हम भी आप की ही प्रार्थना उपासना करते हैं इसलिये हमें भी अपना यथार्थ ज्ञान देकर सदा सुखी करो ॥६१॥

१२ ३२ ३ १२ ३ २ ३१२ ३ २
उप नः सूनवो गिरः शृण्वन्त्वमृतस्य ये।
३ १ २
सुमृडीका भवन्तु नः ॥६२॥ उ० ७।३।१३॥

शब्दार्थः—(ये अमृतस्य सूनवः) जो अमर परमेश्वर के पुत्र हैं (नः गिरः उपशृण्वन्तु) हमारी वाणियों को सुनें (नः) हमारे लिये (सुमृडीका भवन्तु) सदा सुखदायक हों ॥

भावार्थः—हे सज्जन सुखद ! आपकी कृपा के विना, आप अजर अमर प्रभु के प्यारे पुत्र महात्मा सन्त जन नहीं मिलते। दयामय ! हम पर दया करें, कि आपके प्यारे सन्तजनों का समागम हमें मिले, उन महात्माओं की श्रद्धा भक्ति से सेवा करते हुए उन से ही सदुपदेश सुन अपने संदेहों को दूर कर सदा सुखी रहें ॥६२॥

मा भेम माश्रमिष्मोग्रस्य सख्ये तव ।
महत्ते वृष्णो अभिचक्ष्यं कृतं पश्येम तुर्वशं यदुम् ॥६३॥ उ० ७।३।१७॥

शब्दार्थः—हे जगदीश्वर ! (उग्रस्य तव सख्ये) अति बलवान् आप की मित्रता में

(मा भेम) हम किसी से न डरें (मा श्रमिष्म) न थकें (ते वृष्णः) कामना पूरक आपका (महत्) बड़ा (अभिचक्ष्यम्) सर्वतः स्तुति योग्य (कृतम्) कर्म है, आप की मित्रता से (तुर्वशम्) समीप स्थित (यदुम् पश्येम) मनुष्य को हम देखें ॥

भावार्थः—हे परमात्मन् ! संसार में यह प्रसिद्ध है,कि जिसका कोई राजा आदि बलवान् मित्र बन जाता है, तब वह मनुष्य साधारण मनुष्यों से नहीं डरता, प्रायः उसके अधीन सब मनुष्य होजाते हैं। ऐसे ही जो पुरुष, प्रबल प्रतापी आप प्रभु की शरण में आगये और आप को ही अपना मित्र बनाते हैं, वे किसी से भी नहीं डरते, उलटा सब को अपना भाई जान, सब के हित में लगे रहते हैं,

ऐसे सच्चे भक्तों की सब कामनाओं को आप पूर्ण करते हैं ॥६३॥

२ ३२ ३ ३ २ ३ १ २ ३ २ ३ २
यस्यायं विश्व आर्यो दासः शेवधिपा अरिः।
३ १ २ ३ २ ३ २ ३ १ २ ३ १२
तिरश्चिदर्ये रुशमे पवीरवि तुभ्येत्सो
२र ३ २
अज्यते रयिः ॥६४॥ उ० ७।३।१९॥

शब्दार्थः—(यस्य अयं विश्वः आर्यः दासः) जिस परमेश्वर का यह सब आर्यगण सेवक भक्त (शेवधिपा) वेद निधि का रक्षक और (अरिः) प्रापक है उस (अर्ये) स्वामी (रुशमे) नियन्ता (पवीरवि) वेदवाणी के पिता परमेश्वर में (तिरः) छिपा हुआ (चित्) भी (सः रयिः) वह वेद कोष का धन (तुभ्य) तुझ भक्त के लिये (इत् अज्यते) अवश्य प्रकट किया जाता है ॥

भावार्थः—संसार में दो प्रकार के मनुष्य हैं, एक अनार्य अर्थात् अनाड़ी, वेद विरुद्ध सिद्धान्त को कहने और मानने वाले। दूसरे आर्य जो वेदानुसार सिद्धान्त को माननेवाले हैं। जो आर्य हैं वे वेदनिधि के रक्षक और प्रभु के सेवक भक्त हैं, वेद रूपी गुप्त महा-धन, को उपयोग में लाकर आर्य लोग सदा सुखी रहते हैं ॥६४॥

१ २   ३ २ ३ २ ३   १ २ ३   १ २
इन्द्रं वो विश्वतस्परि हवामहे जनेभ्यः।
३   १ २   ३   १ २
अस्माकमस्तु केवलः ॥६५॥ उ० ८।१।२॥

शब्दार्थः—(विश्वतः) सब पदार्थों वा (जनेभ्यः) सब प्राणियों से (परि) उत्तम गुणों करके श्रेष्ठतर (इन्द्रं हवामहे) परमेश्वर को वारंवार अपने हृदय में हम स्मरण

करते हैं। (वः) आपके (अस्माकम्) और हमारे सब लोगों के (केवलः) चेतन मात्र स्वरूप ही इष्ट देव और पूजनीय हैं ॥

भावार्थः—हे चैतन्य स्वरूप प्रभो! आप परमैश्वर्य वाले चेतन मात्र प्रभु की ही हम उपासना करते हैं। आप से भिन्न किसी जड़ वा चेतन मनुष्य, वा किसी प्राणि को अपना इष्टदेव और पूजनीय नहीं मानते, क्योंकि, आपही सब देवों के देव चेतनस्वरूप अधिपति हैं। आपकी ही उपासना से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष यह चार पुरुषार्थ प्राप्त होते हैं, आपको छोड़ इधर उधर भटकने से तो, हमारा दुर्लभ यह मनुष्य देह व्यर्थ चला जायगा, इस लिये हम सब आपको ही अपना पूज्य और उपासनीय इष्टदेव जान,

आपकी उपासना और आपकी वेदोक्त आज्ञा पालने में मन को लगा कर मनुष्य देह को सफल करते हैं ॥६५॥

१ २ ३१र २र ३ १ २ ३ १र २र
त्रीणि पदा विचक्रमे विष्णुर्गोपा अदाभ्यः।
२ ३ १ २ ३ १२
अतो धर्माणि धारयन् ॥६६॥ उ० ८।२।५॥

शब्दार्थः—जिस कारण यह परमेश्वर (अदाभ्यः) किसी से मारा नहीं जा सकता, (गोपाः) सब ब्रह्माण्डों की रक्षा करने वाला, सब जगतों को (धारयन्) धारण करने वाला (विष्णुः) सर्वत्र व्यापक ईश्वर (त्रीणि पदा विचक्रमे) तीनों पृथिवी, अन्तरिक्ष, द्यु लोकों को विधान किया हुआ है (अतो धर्माणि धारयन्) इस कारण सब धर्मों को वेद द्वारा धारण कर रहा है।

भावार्थः—हे विष्णो ! आपने ही वेद द्वारा अग्निहोत्रादि धर्मों को तथा सृष्टि के सब पदार्थों को धारण कर रखा है, आप के धारण वा रक्षण के विना, किसी धर्म वा पदार्थ का धारण वा रक्षण नहीं हो सकता। आप ही सब लोकों, धर्मों और जगत् व्यवहारों के उत्पादक, धारक और रक्षक हैं। ऐसे सर्वशक्तिमान् आप को, ज्ञान और ध्यान कर के ही, हम सब सुखी हो सकते हैं अन्यथा कदापि नहीं ॥६६॥

१र २र ३ १ ३ ३ २ ३ १ २
तद्विप्रासो विपन्यवो जागृवांसः समिन्धते।
२ ३ १ २३ २ ३२
विष्णोर्यत्परमं पदम् ॥६७॥ उ० ८।२।५॥

शब्दार्थः—(विष्णोः यत् परमम् पदम्) व्यापक जगदीश्वर का जो संसार से विलक्षण

उत्तम और सूक्ष्म स्वरूप है (तत्) उस को (विपन्यवः) जगत्पिताके गुणों की जो विशेष प्रशंसा करने वाले (जागृवांसः) जागने वाले (विप्रासः) बुद्धिमान् सज्जन-पुरुष हैं वे (समिन्धते) अच्छे प्रकार प्राप्त होते और दूसरों को भी उपदेश करते हैं ॥

भावार्थः—हे विष्णो ! जो भद्र पुरुष, अविद्या और अधर्माचरणरूप नींद को छोड़, विद्या और सदाचार में तत्परतारूप जागरण को प्राप्त हो रहे हैं। सदा दो घंटे रात्रि रहते उठकर जागने वाले, आप परम पिता का ध्यान और पवित्र वेदमन्त्रों का पाठ तथा उनका अर्थ स्मरण करते हैं। वे ही सच्चिदानन्द-स्वरूप सब से उत्तम सब को प्राप्त होने योग्य, सर्वव्यापक विष्णु आप को प्राप्त होते

हैं। अन्य अज्ञानी दुराचारी और आलसी दरिद्री सदा निद्रा से प्यार करने वाले, आप प्रभु को कभी प्राप्त नहीं हो सकते ॥६७॥

१ २ ३ १ २ ३ १ २
इन्द्र स्थातर्हरीणां नकिष्टे पूर्व्यस्तुतिम्।
१ २ ३ १ २ ३ २ ३ १ २
उदानंश शवसा न भन्दना ॥ ६८ ॥

उ० ८।२।१०॥

शब्दार्थः—(हरीणां स्थातः) हे सूर्य-किरणादि तेजों के स्थापक इन्द्र परमेश्वर! (ते पूर्व्यस्तुतिम्) आप की सनातन वेदोक्त स्तुति को कोई (नकिः उदानंश) नहीं पाता (शवसा न भन्दना) न तो बल से और न तेज से।

भावार्थः—हे परमेश्वर! आप सूर्य चन्द्रादि सब ज्योतियों के उत्पादक और सब प्राणियों

के सुख के लिये इन सूर्यादिकों को अपने २ स्थानों में स्थापन करने वाले हैं। आप की महिमा अपार है और अपार ही आप की स्तुति है, उस का पार जानने का किस का वल वा शक्ति है, अर्थात् कोई पार नहीं पा सकता ॥६८॥

२ ३ २३ १२ २२ ३ २ ३ २ ३
यो जागार तमृचः कामयन्ते यो जागार
२ ३ १ २ २ ३ २३ २३१२
तमु सामानि यन्ति। यो जागार तमयं
२२ ३ २ ३१२ ३ १ २
सोम आह तवाहमस्मि सख्ये न्योकाः॥६९॥

उ० ९।२।५॥

शब्दार्थः—(यो जागार) जो मनुष्य जागता है (तम् ऋचः कामयन्ते) उस को ऋग्वेद के मन्त्र चाहते हैं (यो जागार)

जो जागता है (तम् उ) उसको ही (सामानि यन्ति) साम वेद के मन्त्र प्राप्त होते हैं, (यो जागार) जो जागता है (तम्) उस को (अयम् सोमः आह) यह सोमादि ओषधिगण कहता है कि (अहम् न्योकः) मैं नियत स्थान वाला (तव सख्ये अस्मि) तेरी मित्रता और अनुकूलता में हूं ।

भावार्थः—जो पुरुषार्थी जागरणशील हैं, उनके ही ऋक् साम आदि वेद फलीभूत होते हैं और सोम आदि ओषधियें हाथ जोड़े उसके सामने खड़ी रहती हैं कि, हम सब आप के लिये प्रस्तुत हैं। जो पुरुष निद्रा से बहुत प्यार करने वाले आलसी और उद्यम हीन हैं, उनको न तो वेदों का ज्ञान प्राप्त होता है, और न ओषधियें ही काम देती हैं। इसलिये हम

सब को जागरणशील और उद्योगी बनना चाहिये ॥६९॥

१२ ३ १ २ ३२ ३ १२ ३ २ ३
नमः सखिभ्यः पूर्वसद्भ्यो नमः साकं निषेभ्यः।
३१२ २र ३१२
युञ्जे वाचं शतपदीम् ॥७०॥ उ० ९।२।७॥

शब्दार्थः—(पूर्व सद्भ्यः) प्रथम से विराजमान हुए (सखिभ्यः नमः) मित्रों को नमस्कार करता हूं (साकं निषेभ्यः नमः) साथ साथ आकर बैठे मित्रों को नमस्कार करता हूं (शतपदीम् वाचम् युञ्जे) सैंकड़ों पदों वाली वाणी को मैं प्रयोग करता हूं।

भावार्थः—सभा समाज वा यज्ञ आदि स्थलों में जब पुरुष जावे, तब हाथ जोड़कर सबको नमस्कार करे। यदि बोलने का अवसर मिले, तब भी हाथ जोड़, सब मित्रों को नमस्कार

कर, पीछे व्याख्यान आदि देवे। कभी किसी विद्या वा धन वा जाति वा कुलीनता आदिकों का अभिमान न करे। इस वेद के पवित्र मधुर और सुखदायक उपदेश को मानने वाला निरभिमान उत्तम पुरुष ही सदा सुखी होता है, अभिमानी कभी सुखी नहीं हो सकता॥७०॥

१ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २
शिक्षेयमस्मै दित्सेयं शचीपते मनीषिणे।
२ ३ १ र २ र ३ २
यदहं गोपतिः स्याम्॥७१॥उ० ९।२।९॥

शब्दार्थः—हे बुद्धि के स्वामिन् परमात्मन्! (यत्) यदि (अहं गोपतिः स्याम्) मैं जितेन्द्रिय वाणी वा पृथिवी का स्वामी हो जाऊं तो (अस्मै मनीषिणे) इस उपस्थित बुद्धिमान् जिज्ञासु को (शिक्षेयम्) शिक्षा दूं और (दित्सेयम्) दान देने की इच्छा करूं॥

भावार्थः—हे वेदविद्याऽधिपते अन्तर्यामिन्! आप हम पर कृपा करें कि, हम जितेन्द्रिय हो कर आपकी वेदरूपी वाणी के ज्ञाता होवें और वेदों का पाठ वा उनके अर्थ जानने की इच्छा वाले अधिकारियों को सिखलावें। आप की कृपा से यदि हम पृथिवी वा धन के मालिक बन जायें तो, अनाथों का रक्षण करें और विद्वान् महात्मा पुरुष सुपात्रों को दान देवें॥७१॥

३ १ २ ३ २ ३ १ २ ३ २
धेनुष्ट इन्द्र सूनृता यजमानाय सुन्वते।
१र २र ३ १ २
गामश्वं पिप्युषी दुहे ॥७२॥उ० १।२।१॥

शब्दार्थः—हे इन्द्र परमेश्वर! (ते धेनुः) आप की वेद वाणी रूप गौ (सूनृता) सच्ची (पिप्युषी) वृद्धि करने वाली (सुन्वते) सोमयाजी (यजमानाय) यजमान के लिये

(गाम् अश्वम् दुहे) गौ अश्वादि धन को भरपूर करती है।

भावार्थः—हे परमेश्वर! आप की वेदरूपी वाणी को जो पुरुष श्रद्धा, भक्ति और प्रेम से पढ़ते पढ़ाते और वेदोक्त महा यज्ञादि उत्तम कर्मों को करते कराते हैं। उनको ब्रह्मविद्या और गौ घोड़ा आदि उपकारक पशु तथा धन प्राप्त होता है। वे धर्मात्मा पुरुष भी, परमात्मा की उपासना में तत्पर हुए, इस लोक और परलोक में सदा सुखी रहते हैं ॥७२॥

३१ २ ३ १ २ ३२उ ३ २ ३ १ २
उत वात पितासि न उत भ्रातोत नः सखा।
१ २ ३ १२
स नो जीवातवे कृधि ॥७३॥उ० ९।२।११॥

शब्दार्थः—(उत वात नः पिता) और हे महाशक्ति वाले वायो! आप हमारे पालक

(उत भ्राता) और सहायक (उत नः सखा) और हमारे मित्र (असि) हैं (सः) वह आप (नः जीवातवे कृधि) हमको जीवन के लिये समर्थ करो ।

भावार्थः—हे सर्वशक्तिमन् परमात्मन् ! आप महा समर्थ और हमारे पिता, भ्राता, सखा आदि रूप हैं । हम पर कृपा करो कि, हम ब्रह्मचर्यादि साधन सम्पन्न होकर, पवित्र और बहुत काल तक जीवन वाले बनें, जिस से हम अपना कल्याण कर सकें। आप महा-पवित्र और पतित पावन हैं, हमारी इस प्रार्थना को स्वीकार कर, हमें पवित्र दीर्घ-जीवी बनावें, जिससे आप की भक्ति और पर उपकार आदि उत्तम काम करते हुए हम अपने मनुष्य जन्म को सफल कर सकें ॥७३॥

३ १र २र ३ १ ३ ३ १
भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्ष-
२ ३ १र २र ३ १ २ ३ २ ३क
भिर्यजत्राः । स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवांसस्तनूभि-
२र ३ १ २ ३ १ २र
र्व्यशेमहि देवहितं यदायुः ॥७४॥

उ० १।३।१॥

शब्दार्थः—(यजत्राः देवाः) हे यजनीय पूजनीय देवेश्वर प्रभो वा विद्वानो ! हम लोग (कर्णेभिः भद्रं शृणुयाम) कानों से सदा कल्याण को सुनें (अक्षभिः भद्रं पश्येम) आंखों से कल्याण को देखें (स्थिरैः अङ्गैः) दृढ़ हस्त, पाद, वाणी आदि अङ्गों से और (तनूभिः) देहों से (तुष्टुवांसः) आप की स्तुति करते हुए (यत्) जितनी (आयुः व्यशेमहि) आयु को प्राप्त होवें वह सब

(देवहितम्) आत्मा, शरीर, इन्द्रिय और विद्वानों के हितकारक हो।

भावार्थः—हे पूजनीय परमात्मन् ! वा विद्वानो ! हम पर ऐसी कृपा करो कि, हम कानों से सदा कल्याण कारक वेद मन्त्र और उनके व्याख्यान रूप सदुपदेशों को सुनें, अकल्याण की बात को भी हम कभी न सुनें, आँखों से कल्याण कारक अच्छे दृश्य को ही हम देखें, हम अपनी वाणी से आप के ओंकारादि पवित्र नामों को और सब के उपकारक प्रिय व सत्य शब्दों को कहें, ऐसे ही हमारे हस्त पाद आदि अङ्ग और शरीर, आप की सेवा रूप संसार के उपकार में लगें, कभी अपने शरीर और अङ्गों से किसी की हानि न करें। हम सम्पूर्ण आयु को प्राप्त हों,

वह आयु, आप की सेवा वा विद्वान् धर्मात्मा महात्मा सन्त जनों की सेवा के लिये हो ॥७४॥

३ २ ३ १२र ३१२ ३ १ २ ३१र २र
अरण्योर्निहितो जातवेदा गर्भ इवेत्सुभृतो
३ १ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २३
गर्भिणीभिः। दिवेदिव ईड्यो जागृवद्भिर्ह-
१ २ क २र ३ २
विष्मद्भिर्मनुष्येभिरग्निः ॥७५॥पू० १।२।८।७॥

शब्दार्थः—(जातवेदाः अग्निः) वेद के प्रकाशक, ज्ञान स्वरूप परमात्मा (अरण्योः) हृदय रूपी काष्ठों में (निहितः) अदृश्य रूप से वर्तमान है (गर्भ इव, इत्, सुभृतो, गर्भिणीभिः) जैसे गर्भवती स्त्रियों के गर्भाशय में अदृश्य भाव से गर्भ रहता है। वह जगदीश (जागृवद्भिः) सावधान (हविष्मद्भिः) भक्ति वाले प्रेमी (मनुष्येभिः) मनुष्यों से (दिवेदिवे) प्रति दिन (ईड्यः) स्तुति के योग्य है।

भावार्थः—हम मुमुक्षु पुरुषों के कल्याण के लिये वेदों का प्रकट करने वाला परमात्मा, हमारे हृदयों में अन्तर्यामी रूप से सदा वर्तमान ह। जैसे यज्ञ में अरणी रूप काष्ठों में अग्नि वर्तमान रहता है, ऐसे हम सब के हृदय में वह अदृश्य रूप से सदा वर्तमान है ऐसा सर्वगत परमात्मा जागरण शील, सावधान प्रेम भक्ति वाले मनुष्यों से प्रतिदिन स्तुति के योग्य है। जो पुरुष सावधान हो कर उस परमात्मा की प्रेम से भक्ति करेगा उसी का जन्म सफल होगा ॥७५॥

२ ३ १ २ ३ १२ ३ २ ३ १ २
सोमं राजानं वरुणमग्निमन्वारभामहे ।
३ २उ ३ १ २ ३ १ २ ३ २ ३ १ २
आदित्यं विष्णुं सूर्यं ब्रह्माणं च बृहस्पतिम् ॥

७६॥ पू० १।२।१०।१॥

शब्दार्थः—हम (सोमम्) शान्त स्वरूप, शान्तिदायक, सारे जगत् के जनक (राजानम्) सब के प्रकाशक (वरुणम्) श्रेष्ठ (अग्निम्) सर्वत्र व्यापक पूज्य, ज्ञान स्वरूप, सन्मार्ग प्रदर्शक, परमात्मा को (अनु आरभामहे) प्रतिदिन स्मरण करते हैं (च) और (आदित्यम्) अखण्ड (विष्णुम्) सर्वत्र व्यापक (सूर्यम्) सब चराचर के आत्मा (ब्रह्माणम्) सब से बड़े (बृहस्पतिम्) वेदवाणी के स्वामी को हम सदा स्मरण करते हैं।

भावार्थः—जिस परमेश्वर के ये नाम हैं, सोम, राजा, वरुण, अग्नि, आदित्य, विष्णु, सूर्य, ब्रह्मा और बृहस्पति ऐसे अनन्त नामों वाले परमात्मा को हम सदा स्मरण करते हैं। क्योंकि वह जगत्पति परमेश्वर ही इस

लोक और परलोक में हमें सुखी करने वाला है ॥७६॥

३ १   ३ २ ३   १ २   ३ १ २
रायः समुद्रांश्चतुरोऽस्मभ्यं सोम विश्वतः ।
१ २   ३   १ २
आपवस्व सहस्रिणः ॥७७॥ उ० २।२।१५॥

शब्दार्थः—(सोम)परमात्मन्! (सहस्रिणः) बहुत संख्या वाले (रायः) मणि, मुक्ता, हीरे, सुवर्ण, रजत आदि धन के भरे (चतुरः) चारों दिशास्थ (समुद्रान्) समुद्रों को (अस्मभ्यम्) हमारे लिये (विश्वतः) सब ओर से (आ पवस्व) प्राप्त कराइये ।

भावार्थः—हे परमात्मन्! हीरे,मोती,मणि आदि पूर्ण जो चार दिशाओं में स्थित समुद्र हैं, हम उपासकों के लिये वह प्राप्त कराइये । किसी वस्तु की अप्राप्ति से हम कभी दुःखी

न हों। उस आप की कृपा से प्राप्त धन को, वेदविद्या की वृद्धि और आप की भक्ति और धर्म प्रचार के लिये ही लगावें ॥७७॥

२ ३ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २
यो अग्नि देव वीतये हविष्माँ आविवासति।
१ २
तस्मै पावक मृडय ॥७८॥ उ० २।२।५॥

शब्दार्थः—(यः) जो (हविष्मान्) प्रेम, भक्ति रूपी हवि वाला उपासक पुरुष (देव-वीतये) अपनी दिव्य गति के लिये (अग्निम्) ज्ञानस्वरूप परमात्मा को (आविवासति) उपासना रूपी पूजन करता है (तस्मै) उस के लिये (पावक) हे अपवित्रों को भी पवित्र करने वाले परमात्मन्! (मृडय) आनन्द दीजिये।

भावार्थः—हे पावक! पवित्र स्वरूप, पवित्र करने वाले परमेश्वर! जो उपासक पुरुष

सत्कर्मों को करता हुआ आप की प्रेम पूर्वक उपासना रूप पूजन करता है ऐसे अपने प्यारे उपासक को आप, दिव्यगति मुक्ति देकर सदा आनन्द दीजिये ॥७८॥

२उ ३ १ २ ३ १ २ ३ २ ३ २
त्वमित्सप्रथा अस्यग्ने त्रातर्ऋतः कविः ।
१र २ ३ १ २
त्वां विप्रासः समिधानं दीदिव आविवासन्ति
३ १ २
वेधसः ॥७९॥ पू० १।१।४।८॥

शब्दार्थः—(समिधानं) ध्यान किये हुए (दीदिवः) तेजोमय (त्रातः) रक्षक (अग्ने) परमात्मन्! (त्वं सप्रथः) आप सर्वतो-व्याप्त (ऋतः) सत्य और (कविः) ज्ञानी (असि) हैं। (त्वाम् इत्) आप को ही (वेधसः) मेधावी (विप्रासः) ज्ञानी लोग (आविवासन्ति) सर्व प्रकार से भजते हैं।

भावार्थः—हे परम प्यारे परमात्मन् ! आप सब के रक्षक, तेजोमय, सत्य, सर्वव्यापक और ज्ञानी हैं । आप का ही ज्ञानी महात्मा लोग, भजन करते हुए अपने जन्म को सफल कर के, अपने सत्संगी पुरुषों को भी आप की भक्ति और ज्ञान का उपदेश करते हुए उनका भी कल्याण करते हैं ॥७९॥

२ ३१र २र ३ २ ३ २ ३ १ १
त्वमिमा ओषधीः सोम विश्वास्त्वमपो अज-
३ २ १र २र ३ २ १ २ ३ १
नयस्त्वङ्गाः । त्वमातनोरुर्वा३न्तरिक्षं त्वं
२र १ १र २र
ज्योतिषा वि तमो ववर्थ॥८०॥पू० ६।३।१२।३॥

शब्दार्थः—(सोम) हे परमात्मन् ! (त्वम्) आपने (इमाः) इन (विश्वाः) सब (ओ-षधीः) ओषधियों को (अजनयः) उत्पन्न

किया है (त्वम्) आपने ही (अपः) जलों को (त्वम्) और आपने ही (गाः) गौ आदि पशुओं को उत्पन्न किया है। (त्वम्) आपने ही (उस) बड़े (अन्तरिक्षम्) अन्तरिक्ष लोक और उनके पदार्थों को (आतनोः) फैलाया है (त्वम्) आपने ही (ज्योतिषा) ज्योति से (तमः) अन्धकार को (ववर्थ) छिन्न भिन्न किया है।

भावार्थः—हे परम दयालु परमात्मन् ! आपने हमारे कल्याण के लिये गेहूं, चना, चावल आदि ओषधियों को उत्पन्न किया और आपने ही जलों को, गौ आदि उपकारक पशुओं को, और बड़े अन्तरिक्ष लोक और उस के पदार्थों को बनाया है और सूर्य आदि ज्योतियों से अन्धकार को भी नाश किया है।

यह सब काम हम जो आप के प्यारे पुत्र हैं उनके लिये ही आपने किये हैं ॥८०॥

३ १ ३ ३ १ २ ३ १ २
अभि त्वा शूर नोनुमोऽदुग्धा इव धेनवः।
१ २ ३ १र २र ३ २ १ २
ईशानमस्य जगतः स्वर्दृशमीशानमिन्द्र
३ १ २
तस्थुषः ॥ ॥८१॥ पू० ३।१।५।१॥

शब्दार्थः—(शूर) विक्रमी (इन्द्र) परमेश्वर (अस्य) इस (जगतः) जंगम के (ईशानम्) प्रभु और (तस्थुषः) स्थावर के भी (ईशानम्) स्वामी (स्वर्दृशम्) सूर्य के भी प्रकाश करने वाले (त्वा) आप को (अदुग्धा इव धेनवः) विना दुही हुई गौओं के समान अर्थात् जैसे विना दुही हुई गौएँ अपने बच्छे (सन्तान) के लिये भागी आती हैं ऐसे ही भक्ति से नम्र हुए हम आप के

प्यारे पुत्र (अभिनोनुमः) चारों ओर से वारंवार प्रणाम करते हैं ।

भावार्थः—हे महावली परमेश्वर ! चराचर संसार के स्वामिन्, सूर्य आदि सव ज्योतियों के प्रकाशक, जैसे जंगल में अनेक प्रकार के घास आदि तृणों को खाकर गौएँ अपने बच्चों को दूध पिलाने के लिये भागी चली आती हैं, ऐसे ही प्रेम और भक्ति से नम्र हुए हम आप को बार २ प्रणाम करते हुए आप की शरण में आते हैं ॥८१॥

१ २ ३२उ ३ २ ३ २ ३ २ ३ १२
अच्छा समुद्रमिंदवोऽस्तं गावो न धेनवः ।
१ २ ३२ ३ २ ३ २
अग्मन्नृतस्य योनिमा ॥८२॥ उ० १।१।३॥

शब्दार्थः—(इन्दवः) शान्त स्वभाव, परमेश्वर के उपासक लोग(ऋतस्य योनिम् आ)

सत्य वेद के कर्ता (समुद्रम्) समुद्र के सदृश परम गम्भीर परमात्मा को (अच्छ) भले प्रकार सानन्द (आ अग्मन्) प्राप्त होते हैं, (न) जैसे (धेनवः गावः) दूध देने वाली गौएँ (अस्तम्) घर को प्राप्त होती हैं ।

भावार्थः—शान्त स्वभाव परमेश्वर के प्यारे, भगवद्भक्त उपासक लोग, वेद को प्रकट करने वाले परमात्मा को भली प्रकार प्राप्त होकर आनन्द को पाते हैं। जैसे दूध देने वाली गौएँ वन में घास आदि तृणों को खाकर अपने घरों में आकर सुखी होती हैं, ऐसे ही भगवद्भक्त, परमात्मा की उपासना करते हुए उसी भगवान् को प्राप्त होकर सदा आनन्द में रहते हैं ॥८२॥

२ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १र
मा ते राधांसि मा त ऊतयो वसोऽस्मान्
२र ३ १ २ १ २ ३ १
कदाचनादभन् । विश्वा च न उपमिमीहि
२ ३ १२ ३ २ ३ २
मानुष वसूनि चर्षणिभ्य आ ॥ ८२ ॥

उ० ८।३।५॥

शब्दार्थः—(मानुष) हे मनुष्यों के हितकारक ! (वसो) सब को बसाने वाले वा सब में बसने वाले अन्तर्यामिन् प्रभो ! (ते) आप के (राधांसि) उत्पन्न किये गेहूं, चना, चावल आदि अन्न (अस्मान्) हम को (कदाचन) कभी (मा आदभन्) दुःख न दें, न मारें । (ते) आप की की हुई (ऊतयः) रक्षायें (मा) दुःख न देवें,(च) और (विश्वा) सब (वसूनि) विद्या और सुवर्ण

रजतादि धन (नः) हम (चर्षणिभ्यः) मनुष्यों के लिये (आ उप मिमीहि) सर्वतः दीजिये।

भावार्थः—हे सब के हितकारक सब के स्वामी अन्तर्यामी प्रभो ! आप के दिये अनेक प्रकार के अन्न आदि उत्तम पदार्थ हमको कभी कष्टदायक न हों। आप की की हुई रक्षायें हमें सदा सुखदायक हों। भगवन् ! अनेक प्रकार के पापों का फल जो निर्धनता, दरिद्रता है, वह हमें कभी प्राप्त न हो। किन्तु हमारे देशवासी भ्राताओं को अनेक प्रकार के धन धान्य से पूर्ण कीजिये और सब को धर्मात्मा बना कर सदा सुखी बनाइये ॥८३॥

१ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २
अरं त इन्द्र श्रवसे गमेम शूर त्वावतः ।
१ २ ३ १ २
अरं शक्र परेमणि ॥८४॥ पू० ३।१।२।६॥

शब्दार्थः—(शक्र) हे सर्वशक्तिमन् परमात्मन् ! (शूर) अनन्त सामर्थ्य युक्त (इन्द्र) परमेश्वर ! (त्वावतः) आपके ही तुल्य (ते श्रवसे) आप के यश के लिये (अरम् गमेम) सदा सर्वथा प्राप्त होवें और (परेमणि) मोक्षदायक समाधि में (अरम्) हम सर्वथा प्राप्त होवें।

भावार्थः—हे परमेश्वर ! आप सर्वशक्तिमान् और अनन्त सामर्थ्य युक्त हैं। आपही अपने तुल्य हैं। कृपया हमको ऐसा सामर्थ्य दीजिये, जिससे आपके यश और ध्यान में मग्न होकर हम मोक्ष को प्राप्त हो सकें ॥८४॥

१२ ३ २३ २ ३ १ २ ३ १ २
समस्य मन्यवे विशो विश्वा नमन्त कृष्टयः ।
३ २२३ १ २
समुद्रायेव सिन्धवः ॥८५॥ पू० २।१।५।३॥

शब्दार्थः—(विश्वाः) सब (कृष्टयः) मनुष्य रूप (विशः) प्रजायें (अस्य) इस परमेश्वर के (मन्यवे) तेज के आगे (सम् नमन्त) अच्छी तरह से झुकते हैं (समुद्राय इव सिन्धवः) जैसे समुद्र के लिये नदियें ।

भावार्थः—जैसे सब नदियें समुद्र के सामने जाकर नम्र हो जाती हैं, ऐसे ही सब मनुष्य उस महा तेजस्वी परमात्मा के सम्मुख नम्र हो जाते हैं, उस परमात्मा का तेज सब को दबा देने वाला है ॥ ८५ ॥

१ २ ३ १ २
त्वावतः पुरूवसो वयमिन्द्र प्रणेतः ।
१ २
स्मसि स्थातर्हरीणाम् ॥८६॥ पू० २।२।१०।९॥

शब्दार्थः—(हरीणाम्) मनुष्य आदि सकल प्राणियों के (स्थातः) अधिष्ठाता !

(पुरुवसो) पुष्कल वास देने वाले ! (प्रणेतः) उत्तम मार्ग दर्शक ! (इन्द्र) परमात्मन् ! (वयम्) हम लोग (त्वावतः) आप सदृश ही के (स्मसि) हैं ।

भावार्थः—दयामय परमात्मन् ! आप जैसा न कोई है, न हुआ, और न होगा इस लिये आप के सदृश आप ही हैं । भगवन् ! आप मनुष्य आदि सब प्राणियों के आश्रय देने वाले, सब के पथ प्रदर्शक हैं । सब को जानने वाले सब के अधिष्ठाता हैं । आप की ही हम शरण में आये हैं ॥८६॥

१ २ ३ २ १ ३ २
नि त्वा नक्ष्य विश्पते द्युमन्तं धीमहे वयम् ।
३ १२
सुवीरमग्न आहुत ॥८७॥ पू० १।१।३।६॥

शब्दार्थः—(नक्ष्य) हे सेवनीय (विश्पते)

प्रजापालक ! (आहुत) हे भक्तों से आह्वान किये हुए (अग्ने) परमात्मन् ! (वयम्) हम लोग (सुवीरम्) उत्तम भक्त पुरुषों वाले (द्युमन्तम्) प्रकाश स्वरूप (त्वा) आप का (निधीमहे) निरन्तर ध्यान करते हैं ।

भावार्थः—हे सेवनीय प्रजा पालक भक्त वत्सल परमात्मन् ! हम आप के सेवक, आप महात्मा सन्तजनों के सेवनीय प्रकाश स्वरूप जगदीश्वर का, सदा अपने हृदय में बड़े प्रेम से ध्यान करते हैं। आप दया के भण्डार अपने भक्तों का सदा कल्याण करते हो ॥८७॥

२ ३ १ २ ३ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ २
वात आवातु भेषजं शम्भु मयोभु नो हृदे।
२ १ २
प्रन आयूंषि तारिषत्॥८८॥ पू० २।२।९।१०॥

शब्दार्थः—हे इन्द्र परमात्मन्! (नः) हमारे (हृदे) हृदय के लिये (शम्भु) रोगनिवारक (मयोभु) सुखदायक (भेषजम्) औषध को (वातः) वायु (आवातु) प्राप्त करावे और (नः) हमारी (आयूंषि) आयु को (प्रतारिषत्) विशेष कर बढ़ावे।

भावार्थः—हे दयामय जगदीश! आप की कृपा से ही वायु की शुद्धि द्वारा और औषध के सेवन से बल, नीरोगता प्राप्त होकर आयु की वृद्धि और सुख की प्राप्ति होती है ॥८८॥

१२ ३१ २ ३२र ३१२
इन्द्रं वयं महाधन इन्द्रमर्भे हवामहे।
१२ ३१२ ३ १ २
युजं वृत्रेषु वज्रिणम् ॥८९॥ पू० २।१।४।६॥

शब्दार्थः—(वयम्) हम लोग (महाधने) बड़े युद्ध में (इन्द्रम्) परमात्मा को (हवामहे)

पुकारें और (अर्भे) छोटे युद्ध में भी (वृत्रेपु वज्रिणम्) रोकने वाले शत्रुओं में दण्डधारी (युजम्) जो सावधान है उसी जगत्पति को पुकारें।

भावार्थ:—हम सब को योग्य है कि छोटे, बड़े, बाह्य और आभ्यन्तर सब युद्धों में, उस परम पिता जगदीश की अपनी सहायता के लिये सदा प्रार्थना करें। वह पापियों के पाप कर्म का फल कष्ट देने के लिये सदा सावधान है। इसलिये हम उस प्रभु की शरण में आकर ही सब विघ्नों को दूर कर सुखी हो सकते हैं अन्यथा कदापि नहीं॥८९॥

१ २ ३ २उ ३ १ २ ३ १२
आपवस्व महीमिषं गोमदिन्दो हिरण्यवत्।
१ २ ३१ २
अश्ववत्सोम वीर वत् ॥९०॥ उ० ३।१।३॥

शब्दार्थः—(इन्दो) करुणामृत सागर (सोम) परमात्मन्! आप अपनी कृपा से (गोमत्) गौओं से युक्त (अश्ववत्) घोड़ों से युक्त (हिरण्यवत्) सुवर्णादि धन से युक्त (वीरवत्) पुत्र आदि सन्तान सहित (महीम् इपम्) वहुत अन्न को (आपवस्व) प्राप्त कराइये।

भावार्थः—हे कृपासिन्धो भगवन्! आप अपनी अपार कृपा से, गौ, घोड़े, सुवर्ण, रजत आदि धन और पुत्र, पौत्र आदि युक्त अनेक प्रकार का बहुत अन्न हमें प्राप्त करावें। हमारे गृहों में गौ, घोड़े, बकरी आदि उप-कारक पशु हों तथा अन्न, वस्त्र आदि उपयोग में आने वाले अनेक पदार्थ हों, सुवर्ण चांदी हीरे मोती आदि धन बहुत हो, उस धन को

हम सदा धार्मिक कामों में खर्च करते हुए लोक परलोक में कल्याण के भागी बनें ॥९०॥

१ २ ३१ २ २ २ ३ १ ३ १ २
तद्वो गाय सुते सचा पुरुहूताय सत्वने ।
२ २ ३ २ ३ १ २
शं यद्गवे न शाकिने॥९१॥ पू० २।१।३।१॥

शब्दार्थः—हे प्रभु के प्रेमी जन! (यत्) जो (गवे) पृथिवी के (न) समान (वः) तुम (सुते) स्तोता के लिये (शम्) सुखदायक हो (तत्) उस को (सत्वने) शत्रु के नाश करने वाले (शाकिने) शक्तिमान् (पुरुहूताय) वेदों में बहुत स्तुति किये गए इन्द्र के लिये (सचा) मिल कर (गाय) गायन कर।

भावार्थः—सब मनुष्यों को चाहिये कि, बाह्य आभ्यन्तर सब शत्रु विनाशक परमेश्वर की प्रसन्नता के लिये उस के गुणों का बखान

मिल जुल कर करें। जैसे पृथिवी सब का आधार होने से सब को सुख दे रही है। ऐसे ही परमात्मदेव सब का आधार और सब के सुखदायक हैं, उन की सदा प्रेम से भक्ति करनी चाहिये ॥९१॥

शन्नो देवीरभिष्टये शन्नो भवन्तु पीतये।
शंयोरभिस्रवन्तु नः ॥९२॥ पू० १।१।३।१३॥

शब्दार्थः—(देवीः) परमेश्वर की दिव्य शक्तियें (नः) हमारे (अभिष्टये) मनोवाञ्छित पदार्थ की प्राप्ति के लिये (शम्) सुखदायक (भवन्तु) होवें (नः) हमारी (पीतये) तृप्ति के लिये (शम्) सुखदायक होवें और (नः) हमारे लिये (शंयोः) सब सुख की (अभिस्रवन्तु) सब ओर से वर्षा करें।

भावार्थः—सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान् परमात्मा की दिव्य शक्तियें, हमें मनोवाञ्छित सुख की दात्री होवें। वे ही प्रभु की अचिन्त्य दिव्य शक्तियें, हमें तृप्तिदायक होवें और हम पर सुख की वर्षा करें। इस संसार में हमें सदा सुखी रख कर मुक्ति धाम में सर्व दुःख-निवृत्ति पूर्वक परमानन्द की प्राप्ति करावें। ऐसी दयामय जगत्पति परमात्मा से नम्रता पूर्वक हमारी प्रार्थना है कि, परम पिता जी ऐसी प्रार्थना को स्वीकार कर हमें सदा सुखी बनावें ॥९२॥

३ २ ३ १ २ ३ १ २
पावमानीः स्वस्त्ययनीस्ताभिर्गच्छति
३ २ १ २ ३ १ २ ३ १
नान्दनम्। पुण्यांश्च भक्षान् भक्षयत्यमृतत्वं
२
च गच्छति ॥९३॥ उ० ५।२।८॥

शब्दार्थः—(पावमानीः) पवित्र स्वरूप और पवित्र करने वाली वेद की ऋचायें (स्वस्त्ययनीः) कल्याण करनेहारी (ताभिः) उन के अध्ययन और मनन करने से मनुष्य (नान्दनम्) आनन्द को (गच्छति) प्राप्त होता है (च) और (पुण्यान्) पवित्र (भक्षान्) भोज्यों को (भक्षयति) भोजन करता है (च) तथा (अमृतत्वं) अमर भाव को अर्थात् मुक्ति के आनन्द को (गच्छति) प्राप्त हो जाता है।

भावार्थः—वेद की पवित्र ऋचायें, स्वाध्याय-शील धार्मिक पुरुष को पवित्र करती और शरीर को नीरोग रखकर अनेक सुन्दर भोज्य पदार्थों को प्राप्त कराती हैं और मुक्ति धाम तक पहुंचाती हैं। क्योंकि वेदवाणी परमात्मा

की दिव्यवाणी है उसका श्रवण, मनन, और निदिध्यासन करने से परमात्मा का ज्ञान और सब दुःखों का भंजन करने वाली और सब सुखों की वर्षा करने वाली परमात्मा की परा भक्ति प्राप्त होती है । इसी से अधिकारी मुमुक्षु मोक्ष धाम को प्राप्त होता है ॥९३॥

१ २ ३ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ २ ३ १
येन देवाः पवित्रेणात्मानं पुनते सदा ।
१२ ३१२ ३ १ २
तेन सहस्रधारेण पावमानीः पुनन्तु नः॥९४॥

उ० ५।२।८॥

शब्दार्थः—(येन पवित्रेण) पवित्र करने वाले जिस कर्म से (देवाः) विद्वान् (आत्मानम्) अपने आत्मा को (सदा पुनते) सदा पवित्र करते हैं (तेन सहस्र धारेण) उस

अनन्त धाराओं वाले कर्म से (पावमानीः) पवित्र करने वाली वेदों की ऋचाएं (नः पुनन्तु) हमें पवित्र करें।

भावार्थः—जिस प्रणव जप और वेदों के पवित्र मन्त्रों के स्वाध्याय रूप पवित्र कर्म से, प्रभु के उपासक, स्वाध्यायशील विद्वान् महात्मा लोग, अपने आतमा को सदा पवित्र करते हैं। उस अनन्त धारणा शक्तियों से सम्पन्न, ईश्वर प्राणिधान और वेद स्वाध्याय रूप कर्म से, सारे संसार को पवित्र करने वाली वेदों की ऋचाएं हम को पवित्र करें ॥९४॥

१ २ ३ २ ३ १ २ ३१ २ ३ २ ३ २
तं त्वा नृम्णानि बिभ्रतं सधस्थेषु महो दिवः।
१ २ ३ १२
चारुं सुकृत्यये महे ॥९५॥उ० २।२।३॥

शब्दार्थः—हे परमात्मन् ! (महोदिवः) अनन्त आकाश के (सधस्थेषु) साथ वाले सब लोकों में और उनसे भी बाहिर व्यापक (नृम्णानि) धनों व बलों को (बिभ्रतम्) धारते हुए (चारुम्) आनन्द स्वरूप (तम् त्वा) उस अनेक वैदिक सूक्तों से स्तुति किये हुए आप को (सुकृत्यया) सुकर्म से (ईमहे) हम पाते हैं ।

भावार्थः—हे सर्वव्यापक परमात्मन् ! इस बड़े आकाश में और इस से बाहिर भी आप व्यापक होकर, सब धन और बल को धारण करने वाले आनन्द स्वरूप हो । ऐसे आप को उत्तम वैदिक कर्म करते हुए और वैदिक स्तोत्रों से ही आप की स्तुति करते हुए हम प्राप्त होते हैं ॥९५॥

१२ ३ १ २ ३१२ २२ ३ १ २ ३ १ २
पवस्य वाचो अग्रियः सोम चित्राभिरूतिभिः।
३ १ १२ ३ १ २
अभि विश्वानि काव्या ॥९६॥उ० २।१।१॥

शब्दार्थः—(सोम) हे शान्तस्वरूप परमात्मन् ! (अग्रियः) सब में मुख्य आप (विश्वानि काव्या) सब स्तोत्रों और (वाचः) प्रार्थनाओं को (चित्राभिः) अनेक प्रकार की (ऊतिभिः) रक्षाओं से (अभि) सब ओर से (पवस्व) पवित्र कीजिए।

भावार्थः—हे शान्तिदायक, शान्तस्वरूप परमात्मन् ! आप अपनी कृपा से आप के प्यारे पुत्र जो हम हैं उनसे अनेक वेद के पवित्र मन्त्रों से की हुई प्रार्थना को सुनकर हम पर प्रसन्न हुए हमें शान्त और पवित्र कीजिए और हमारी सदा रक्षा कीजिये ॥९६॥

१ २ ३ २ ३ २ ३ १ २ ३ १ २
आ त्वा ब्रह्मयुजा हरी वहतामिन्द्र केशिना।
२ ३ १ ३
उप ब्रह्माणि नः शृणु ॥९७॥ उ० १।१।६॥

शब्दार्थः—(इन्द्र) परमात्मन् ! (केशिना) वृत्ति रूप केशों वाले (ब्रह्मयुजा) ब्रह्म में योग करने वाले (हरी) आत्मा और मन दोनों (त्वा) आप को (आवहताम्) प्राप्त हों (नः) हमारे (ब्रह्माणि) वेदोक्त स्तोत्रों को (उपशृणु) स्वीकार कीजिये।

भावार्थः—हे दयामय परमेश्वर ! हम सब का जीव और मन जिन की वृत्तियां ही केश के तुल्य हैं, ऐसे दोनों आप के ब्रह्मानन्द को प्राप्त होवें और हमारी यह भी प्रार्थना है कि, जब हम लोग वेद के पवित्र मन्त्रों को प्रेम से पढ़ें, तब आप कृपा करके

स्वीकार करें जैसे दयालु पिता अपने पुत्र की तोतली वाणी से की हुई प्रार्थना को सुन कर बड़ा प्रसन्न होता है, ऐसे ही परम प्यारे पिता जी हमारी प्रार्थना को सुन कर परम प्रसन्न होवें ॥९७॥

१ २ ३ १ २ ३ २ २ १र २र ३१२
त्वं समुद्रिया अपोग्रियो वाच ईरयन् ।
१ २
पवस्व विश्वचर्पणे ॥९८॥ उ० २।१।१॥

शब्दार्थः—(विश्वचर्पणे) हे सर्वसाक्षिन् (अग्रियः) मुख्य (त्वम्) आप (समुद्रियाः) आकाशस्थ मेघ के (अपः) जलों और (वाचः) वेद वाणियों को (ईरयन्) प्रेरित करते हैं । वह आप (पवस्व) हमें पवित्र कीजिये ।

भावार्थः—हे सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमन्,

जगदीश, आप सब के पूज्य और सब के अग्रणीय हैं। आप आकाश में स्थित बादलों के प्रेरक हैं। अपनी इच्छा से ही जहां तहां वर्षा करते हैं। पवित्र वेद वाणी को आप ने ही हमारे कल्याण के लिये प्रकट किया है। आप कृपा करें कि हम सब मनुष्यों के हृदय में उस वेद वाणी का प्रकाश हो, उसी में श्रद्धा हो, उसी से हमारा जीवन पवित्र हो ॥९८॥

१ २   १ २ ३ १ २
पवमानस्य विश्ववित्प्र ते सर्गा असृक्षत ।
१ २ ३ २ ३ १ २
सूर्यस्येव न रश्मयः ॥९९॥ उ० ३।२।२॥

शब्दार्थः—(विश्ववित्) हे सर्वज्ञेश्वर ! (पवमानस्य) पवित्र करते हुए (ते) आप की (सर्गा) वैदिक ऋचा रूपिणी धारायें

(प्र असृक्षत) ऐसी छूटती हैं (न) जैसे (सूर्यस्य इव रश्मयः) सूर्य की किरणें निकलती हैं।

भावार्थः—हे सर्वज्ञ सर्वशक्तिमन् जगदीश्वर ! पवित्र करते हुए आप से वेद की पवित्र ऋचाएँ प्रकट होती हैं। जो ऋचायें यथार्थ ज्ञान का उपदेश करती हुई मुक्ति धाम तक पहुँचाने वाली हैं। भगवन्! जैसे सूर्य से प्रकट हुई किरणें सारे संसार का अन्धकार दूर करती हुई सब का उपकार कर रही हैं, ऐसे ही महातेजस्वी प्रकाश स्वरूप आप से वेद की ऋचारूपी किरणें प्रकट होकर, सब संसार का अज्ञान रूपी अन्धकार दूर करती हुई उपकार कर रही हैं। यह आप की सर्व. संसार पर बड़ी भारी कृपा है ॥९९॥

३ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ २ २ ३ २
स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा
३ १ २ ३ २ ३ १ ३ १ २
विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः
३ २ ३ २३ १ २
स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥१००॥उ०९।३।९॥

शब्दार्थः—(वृद्धश्रवाः इन्द्रः) सब से बढ़ कर यश वाला वा बहुत सुनने वाला परमेश्वर (नः स्वस्ति दधातु) हमारे लिये कल्याण को धारण करे। (विश्ववेदाः पूषा) सब को जानने और पालन करने वाला प्रभु (नः स्वस्ति) हमारे लिये सुख वा कल्याण को धारण करे। (अरिष्टनेमिः) अरिष्ट जो दुःख उन को (नेमिः) वज्र के तुल्य काटने वाला ईश्वर (तार्क्ष्यः) जानने वा प्राप्त होने योग्य (नः स्वस्ति) हमारे लिये कल्याण

को धारण करे। (बृहस्पतिः) बड़े २ सूर्य, चन्द्र, शुक्र, बुध, मंगल आदि ग्रह, उपग्रह, लोक, लोकान्तरोंका धारक, पालक, मालिक, पोषक, प्रभु वा वेद चतुष्टय रूप बड़ी वाणी का उत्पादक, रक्षक वा स्वामी (नः स्वस्ति) हमारे सब के लिये कल्याण को धारण करे।

भावार्थः—सब से बढ़ कर यशस्वी, सर्वज्ञ, सब का पालक इन्द्र, भक्तों के दुःखों को काटने वाला, जानने योग्य, सूर्य आदि सब बड़े पदार्थों का जनक और हमारे सब के लिये वेदों का उत्पादक परमात्मा हम सब का कल्याण करे ॥१००॥

ओ३म् शान्तिश्शान्तिश्शान्तिः ॥